त्याग और तपस्या

त्याग और तपस्या

अव्यक्त वााणी संकलन

आध्यात्मिक अनुप्रयोग अनुसन्धान केन्द्र

Spiritual Applications Research Centre (SpARC)

पोस्ट बॉक्स नं.- 66, ज्ञान सरोवर, आबू पर्वत–307501,

राजस्थान.

त्याग और तपस्या

तुम सभी को ज्ञान कौनसा देते हो? त्रिमूर्ति का। जैसे त्रिमूर्ति का ज्ञान औरों को देते हो वैसे अपने पास भी तीन बातों का ज्ञान रखना है। तीन बातें छोड़ो और तीन बातें धारण करो। अब यह तीन बातें छोड़ेंगे तब ही स्वरूप में स्थित होंगे। सर्विस में सफलता भी होगी। बताओ कौन सी तीन बातें छोड़नी हैं? जो सर्विस में विघ्न डालती हैं, वह छोड़नी हैं। एक तो-कभी भी कोई बहाना नहीं देना। दूसरा कभी भी किससे सर्विस के लिए कहलाना नहीं। तीसरा – सर्विस करते कभी मुरझाना नहीं। बहाना, कहलाना और मुरझाना यह तीन बातें छोड़नी हैं। और फिर कौनसी तीन बातें धारण करनी हैं? त्याग, तपस्या और सेवा। यह तीन बातें धारणा में चाहिए। तपस्या अर्थात् याद की यात्रा और सर्विस के बिना भी जीवन नहीं बन सकती। इन दोनों बातों की सफलता त्याग के बिना नहीं हो सकती। इसलिए तीन बातें छोड़नी हैं और तीन बातें धारण करनी हैं। अगर इन तीनों बातों की धारणा हुई तो क्या बन जायेंगे? जो आपका गायन है ना वही स्वरूप बन जायेंगे। यहाँ आबू में भी आपका गायन है किस रूप में और कौन सा रूप यादगार का है? तपस्या के साथ-साथ और भी कोई मुख्य रूप का यादगार है? जिन्होंने देलवाड़ा मन्दिर ध्यान से देखा होगा उन्हें याद होगा। जैसे तपस्वी हैं, तो त्रिनेत्री भी हैं। तपस्या के साथ-साथ याद त्रिमूर्ति की है। तो जैसा यादगार है त्रिनेत्री का, ऐसा बनना है। तीसरा नेत्र कौन सा है? ज्ञान का। ज्ञान का तीसरा नेत्र ही यादगार के रूप में दिखाया है। तपस्वी और त्रिनेत्री। तीसरा नेत्र कायम होगा तब ही तपस्वी बन सकेंगे। अगर ज्ञान का नेत्र गायब हो जाता है तो तपस्या भी नहीं रह सकती। इसलिए अब त्रिमूर्ति शब्द को भी याद करके धारणा में चलेंगे तो वह बन जायेंगे। जो शक्तियों का गायन है, जो प्रभाव है वह देखने में आयेगा। 06-02-1969

संगमयुगी ब्राह्मणों का मुख्य संस्कार कौनसा है? साकार रूप में मुख्य संस्कार कौन-सा था? जो ब्रह्मा का संस्कार वह ब्राह्मणों का। साकार ब्रह्मा का मुख्य संस्कार कौन सा था। ब्रह्मा में तो वह संस्कार सम्पूर्ण रूप से देख लिया। लेकिन

ब्राह्मणों में यथा योग, यथा शक्ति है। उनका मुख्य संस्कार था – सर्वस्व त्यागी। निरंहकारी का मतलब ही है सर्वस्व त्यागी। अपना सभी कुछ त्याग कर लेते हैं। सर्वस्व त्यागी होने से सर्वगुण आ जाते हैं। दूसरों के अवगुणों को न देखना, यह भी त्याग है। त्याग का अभ्यास होगा तो यह भी त्याग कर सकेंगे। सर्वस्व त्यागी अर्थात् देह के भान का भी त्याग। तो ब्राह्मणों का मुख्य संस्कार है – सर्वस्व त्यागी। इस त्याग से मुख्य गुण कौन से आते हैं? सरलता और सहनशीलता। जिसमें सरलता, सहनशीलता होगी वह दूसरों को भी आकर्षण जरूर करेंगे। और एक दो के स्नेही बन सकेंगे। अगर सरलता नहीं तो स्नेह भी नहीं हो सकता। एक दो म ें स्नेही बनना है तो उसका तरीका यह है। एक तो सर्वस्व त्यागी देह सहित। इस सर्वस्व त्यागी से सरलता, सहनशीलता आपे ही आयेगी। सर्वस्व त्यागी की यह निशानी होगी – सरलता और सहनशीलता। 17-04-1969

बापदादा का स्नेह बच्चों से कितना है? बापदादा का स्नेह अविनाशी है। और बच्चों का स्नेह कभी कैसा, कभी कैसा रहता है। एकरस नहीं है। कभी तो बहुत स्नेहमूर्त देखने में आते हैं। कभी स्नेह की मूर्ति की बजाय कौन-सी मूर्त दिखाई पड़ती है? वा तो स्नेही हैं वा तो संकटमई। अपने मूर्त को देखने लिये क्या अपने पास रखना चाहिए? दर्पण। दर्पण हरेक पास है? अगर दर्पण होगा तो अपना मुखड़ा देखते रहेंगे और देखने से जो भी कमी होगी उनको भरते रहेंगे। अगर दर्पण ही नहीं होगा तो कमी को भर नहीं सकेंगे। इसलिये हर वक्त अपने पास दर्पण रखना। लेकिन यह दर्पण ऐसा है जो आप समझेंगे हमारे पास है परन्तु बीच-बीच में गायब भी हो जाता है। जादू मंत्र का दर्पण है। एक सेकेण्ड में गायब हो जाता है। दर्पण कैसे अविनाशी कायम रह सकता है? उसके लिये मुख्य क्वालीफिकेशन कौन-सी होनी चाहिए? जो अर्पणमय होगा उनके पास दर्पण रहेगा। अर्पण नहीं तो दर्पण भी अविनाशी नहीं रह सकता। दर्पण रखने लिये पहले अपने को पूरा अर्पण करना पड़ेगा। जिसको दूसरे शब्दों में सर्वस्व त्यागी कहते हैं। सर्वस्व त्यागी के पास दर्पण होता है। अव्यक्ति मिलन भी वही कर सकता है जो अव्यक्ति स्थिति में हो। 17-05-1969

नम्बरवन का मुख्य कर्तव्य है – अपने जैसा नम्बरवन बनाना। कुमारियों को तो अभी एक और पेपर देना है। वह पेपर प्रैक्टिकल का, न कि लिखने का। अभी तो एक मास की ट्रेनिंग की रिजल्ट में नम्बरवन है। लेकिन फाइनल रिजल्ट में भी नम्बरवन आ सकती है। लेकिन उसके लिये कौन सी मुख्य बात बुद्धि में रखनी है? त्याग और सेवा तो है, एक और मुख्य बात है। सभी से बड़ा बलिदान कौन सा है और सभी से बड़ा त्याग कौन सा है? दूसरों के अवगुणों को त्याग करना– यह है बड़ा त्याग। 16-06-1969

समय प्रति समय हर एक छोटा, बड़ा अपनी शक्ति और स्वमान को रखने की कोशिश करता है। और आगे चल कर यह कुछ समस्या ज्यादा सामने आने वाली हैं इसलिए ही जो निमित्त बने हुए हैं उनको बहुत निर्माणचित्त बनना पड़ेगा। निर्माण अर्थात् अपने मान का भी त्याग। त्याग से फिर और ही ज्यादा भाग्य मिलता है। जितना आप त्याग करेंगे उतना और ही आपको स्वमान मिलेगा। जितना अपना स्वमान खुद रखवाने की कोशिश करेंगे उतना ही स्वमान गंवाने का कारण बन जायेंगे। इसलिए बालक और मालिकपने की सीढ़ी को जल्दी-जल्दी उतरो और चढ़ो इस अभ्यास को बढ़ाना है। 23-07-1969

निश्चय बुद्धि है, वह विजयी है ही। बाप और स्वयं में निश्चयबुद्धि हैं तो विजय कहाँ जावेगी। निश्चयबुद्धि के पीछेपीछे विजय आती है। वह विजय के पीछे नहीं दौड़ते, विजय उनके पीछे दौड़ती है। हम विजयी बनें इस संकल्प का भी वह त्याग कर लेते। ऐसे सर्वस्व त्यागी हो? सर्वस्व त्यागी और सर्व संकल्पों के त्यागी। सिर्फ सर्व सम्बन्धों का त्याग नहीं। सर्व संकल्पों से भी त्यागी। यही सम्पूर्ण स्थिति है। 02-04-1970

आज भट्ठी का आरम्भ करने के लिए बुलाया है। इस भट्ठी में सर्व गुणों की धारणा मूर्त्त बनने के लिए वा सम्पूर्ण ज्ञानमूर्त्त बनने के लिए आये हो। इसके लिए मुख्य तीन बातें ध्यान में रखना है। वह कौन-सी? जिन तीन बातों से सम्पूर्ण ज्ञानमूर्त्त और सर्व गुणमूर्त्त बनकर ही जाओ। सारी नालेज का सार उन तीन शब्दों में समाया

हुआ है। वह कौन से शब्द हैं? एक त्याग, दूसरा तपस्या और तीसरा है सेवा। इन तीनों शब्दों की धारणामूर्त्त बनना अर्थात् सम्पूर्ण ज्ञानमूर्त्त और सर्व गुणों की मूर्त्त बनना। त्याग किसको कहा जाता है? निरन्तर त्यागवृत्ति और तपस्यामूर्त्त बनकर हर सेकेण्ड हर संकल्प द्वारा हर आत्मा की सेवा करना है। यह सीखने के लिए भट्ठी में आये हो। वैसे तो त्याग और तपस्या दोनों को जानते हो फिर अभी क्या करने आये हो?(कर्मो में लाने के लिए) भल जानते हो लेकिन अभी जो जानना है, उस प्रमाण चलना, दोनों को समान बनाने के लिए आये हो। अभी जानने और चलने में अन्तर है। उस अन्तर को समाप्त करने के लिए भट्ठी में आये हो। ऐसे तपस्वीमूर्त्त वा त्यागमूर्त्त बनना है जो आप के त्याग और तपस्या की शक्ति के आकर्षण दूर से प्रत्यक्ष दिखाई दें। जैसे स्थूल अग्नि वा प्रकाश अथवा गर्मी दूर से ही दिखाई देती है वा अनुभव होती है। वैसे आप की तपस्या और त्याग की झलक दूर से ही आकर्षण करे। हर कर्म में त्याग और तपस्या प्रत्याक्ष दिखाई दे। तब ही सेवा में सफलता पा सकेंगे। सिर्फ सेवाधारी बनकर सेवा करने से जो सफ़लता चाहते हो, वह नहीं हो पाती है। लेकिन सेवाधारी बनने के साथ-साथ त्याग और तपस्यामूर्त्त भी हो तब सेवा का प्रत्यक्ष फल दिखाई देगा। तो सेवाधारी तो बहुत अच्छे हो लेकिन सेवा करते समय त्याग और तपस्या को भूल नहीं जाना है। तीनों का साथ होने से मेहनत कम और प्राप्ति अधिक होती है। समय कम सफलता अधिक। तो इन तीनों को साथ जोड़ना है। यह अच्छी तरह से अभ्यास करके जाना है।

वर्तमान समय में नालेज की प्राप्ति अपने पुरुषार्थ की सफलता और सेवा में सफलता का अनुभव होता है। सफलता के आधार पर अपनी नालेज को जान सकते हो। तो भट्ठी में आये हो चेक करने और कराने के लिए कि कहाँ तक नालेजफुल बने हैं? कोई भी पुराने संकल्प वा संस्कार दिखाई न दें। इतना त्याग सीखना है। मस्तक अर्थात् बुद्धि की स्मृति वा दृष्टि से सिवाए आत्मिक स्वरूप के और कुछ भी दिखाई न दे वा स्मृति में न आये। ऐसे निरन्तर तपस्वी बनना है। जिस भी संस्कार वा स्वभाव वाले चाहे रजोगुणी, चाहे तमोगुणी आत्मा हो। संस्कार वा स्वभाव के वश हो, आप के पुरुषार्थ में परीक्षा के निमित्त बनी हुई हो लेकिन हर आत्मा के प्रति सेवा अर्थात्

कल्याण का संकल्प वा भावना उत्पन्न हो। ऐसे सर्व आत्माओं का सेवाधारी अर्थात् कल्याणकारी बनना है।

विशेषार्थ में विघ्न रूप होता है। वह कौन-सा ? कुमारों में यह संस्कार होता है जो कामनाओं को पूर्ण करने के लिए संस्कारों को रख देते हैं। जैसे जेब खर्च रखा जाता है ना। जैसे राजाओं की राजाई तो छूट गयी लेकिन पिरवी पर्श को नहीं छोड़ते। इसी रीति संस्कारों को कितना भी खत्म करते हैं लेकिन जेब खर्च माफिक कुछ-न-कुछ किनारे रखते ज़रूर हैं। यह है मुख्य संस्कार। यहाँ भट्ठी में जानते भी हैं और चलने की हिम्मत भी धारण करते हैं लेकिन फिर भी माया पिरवी पर्श की रीति से कहाँ न कहाँ किनारे में रह जाती है। समझा। तो इस भट्ठी में सभी त्याग करके जाना। यह नहीं सोचना कि सम्पूर्ण तो अभी अन्त में बनना है तो थोड़ा बहुत रहेगा ही। लेकिन नहीं। त्याग अर्थात् त्याग। जेबखर्च माफिक अपने अन्दर थोड़ा बहुत भी संस्कार रहने नहीं देना है। समझा। जरा भी संस्कार अगर रहा होगा तो वह थोड़ा संस्कार भी धोखा दिला देता है। इसलिए बिल्कुल जो पुरानी जायदाद है, वह भस्म कर के जाना। छिपाकर नहीं रखना। समझा। अच्छा।

जैसे तपस्वी सदैव आसन पर बैठते हैं वैसे अपनी एकरस आत्मा की स्थिति के आसन पर विराजमान रहो। इस आसन को नहीं छोड़ो तब सिंहासन मिलेगा। ऐसा प्रयत्न करो जो देखते ही सब के मुख से एक ही आवाज़ निकले कि यह कुमार तो तपस्वी कुमार बनकर आये हैं। हर कर्मेन्द्रिय से देह अभिमान का त्याग और आत्माभिमानी की तपस्या प्रत्यक्ष रूप में दिखाई दे। क्योंकि ब्रह्मा की स्थापना का कार्य तो चल ही रहा है। ईश्वरीय पालना का कर्त्तव्य भी चल ही रहा है। अब लाइट में तपस्या द्वारा अपने विकर्मो और हर आत्मा के तमोगुण और प्रकृत्ति के तमोगुणी संस्कारों को भस्म करने का कर्त्तव्य चलना है। अब समझा कि कौन-से कर्त्तव्य का अभी समय है। तपस्या द्वारा तमोगुण को भस्म करने का। जैसे अपने चित्रों में शंकर का रूप विनाशकारी अर्थात् तपस्वी रूप दिखाते हैं, ऐसे एक रस स्थिति के आसन पर स्थित हो तपस्वी रूप अपना प्रत्यक्ष दिखाओ। 19-04-1971

अपने को वृक्षपति की सन्तान समझते हो? वृक्ष की निशानी भक्तिमार्ग में भी चली आती है। जब तपस्वी तपस्या करते हैं तो वृक्ष के नीचे तपस्या करते हैं। इसका रहस्य क्या है? वृक्ष के नीचे तपस्या क्यों करते हैं? उसका कारण क्या है, यह शुरू क्यों हुआ? इसका बेहद का रहस्य क्या है, इस सृष्टि रूपी वृक्ष में भी आप लोगों का निवास स्थान कहां है? वृक्ष के नीचे जड़ में बैठे हो ना। चित्र जो अभी ज्ञान सहित बनाये जाते हैं वही फिर यादगार भक्तिमार्ग में चलता रहता है। वृक्ष के चित्र में दूर से क्या दिखाई देता है? तपस्वी तपस्या कर रहे हैं, जैसे वृक्ष के नीचे तपस्वी बैठे हैं। वृक्ष के नीचे बैठने से आटोमेटीकली वृक्ष की नालेज सारी बुद्धि में आ जाती है। वृक्ष के नीचे बैठेंगे तो न चाहते हुए भी फल, फूल पत्तों आदि में अटेन्शन जाता ही है। तो यह भी जब कल्पवृक्ष के नीचे फाउन्डेशन में बैठते हो तो सारे वृक्ष का नालेज बुद्धि में आटोमेटीकली रहता है। जैसे बीज में वृक्ष की सारी नालेज रहती है, इसी रीति अपने को इस कल्प वृक्ष का फाउन्डेशन अथवा वृक्ष के नीचे जड़ में अपने को समझते हो तो सारे वृक्ष की नालेज आटोमेटिकली बुद्धि में आ जाती है। यह जो आपकी स्टेज है, उसका यादगार भक्तिमार्ग में चलता आया है। यह है प्रैक्टिकल। तपस्या कर रहे हो। भक्ति मार्ग में फिर स्थूल वृक्ष के नीचे बैठकर तपस्या करते हैं। देखो शुरू-शुरू में आपको नशा रहता था कि हम वृक्ष के ऊपर बैठे हैं। सारा वृक्ष नीचे है, हम ऊपर हैं। ऊपर भी ठहरे ना। अगर वृक्ष को उल्टा कर देंगे तो ऊपर हो जायेंगे। तो जैसे पहले नशा बहुत रहता था कि हम इस वृक्ष के ऊपर बैठकर सारे वृक्ष को देख रहे हैं, ऐसे ही अभी भी यह भिन्न-भिन्न प्रकार से तपस्या का नशा रहता है? पहले की खुमारी इस खुमारी से ज्यादा थी वा अभी ज्यादा है? वह सिर्फ तपस्या का रुप था। अभी तपस्या और सेवा साथ-साथ हो गई है। वह नशा सिर्फ तपस्या का ही रहता था। नीचे उतरने का कोई कारण नहीं था। और अभी तपस्या और सेवा दोनों ही साथ-साथ चलती हैं। दोनों कार्य चल रहे हैं तो बीच-बीच में अपने आपको नशा चढ़ाने का खास अटेन्शन रखना चहिए। इसको ही बैटरी चार्ज कहते हैं। ऐसे अनुभव करेंगे जैसे सच-सच वृक्ष सारा इमर्ज रूप में है और हम साक्षी होकर इस वृक्ष को देख रहे हैं। यह भी नशा बहुत खुशी दिलाता है। शक्ति दिलाता है। इसलिए वृक्षपति और वृक्ष का गायन बहुत है।

तो ऐसे भिन्न-भिन्न प्रकार की सेवा करते हुए भी तपस्या का बल अपने में आप ही भरते रहना है। जिससे तपस्या और सेवा दोनों कम्बाइन्ड और एक साथ रहेंगे। ऐसे नहीं कि सेवा में आ गये तो तपस्या भूल गये। नहीं, दोनों साथ-साथ रहें। कम्बाइन्ड रूप है ना। 25-06-1971

लौकिक प्रवृत्ति को भी ईश्वरीय प्रवृत्ति में परिवर्तन किया है? जब तक परिवर्तन नहीं किया है तब तक अलौकिक स्थिति में एकरस नहीं रह सकते। इसलिए कहा था कि अपना नाम, रूप, गुण और कर्त्तव्य सदैव याद कर फिर प्रवृत्ति में रहो। जिससे लौकिक प्रवृत्ति परिवर्तन हो। सदैव अपने को सेवाधारी समझने से रोब नहीं रहेगा। सेवाधारी सदैव नम्रचित्त, निर्माण रहता है। और अपने घर को भी घर नहीं लेकिन सेवा-स्थान समझेगा। और सेवाधारी का मुख्य गुण है त्याग। अगर त्याग नहीं तो सेवा भी नहीं हो सकती। त्याग से तपस्वीमूत्र्त बनते हो। सेवाधारी का कर्त्तव्य है सदैव सेवा में रहना। चाहे मन्सा सेवा में रहे, चाहे वाचा सेवा में रहे, चाहे कर्मणा सेवा में रहे लेकिन सेवाधारी अर्थात् निरन्तर सेवा में तत्पर रहने वाले। वह कभी भी सेवा को अपने से अलग नहीं समझेंगे। निरन्तर सेवा का ही ध्यान रहेगा। इसको कहते हैं सेवाधारी। तो अपने को सेवाधारी समझो और सेवा-स्थान समझकर रहो, त्याग वृत्ति वाले तपस्वीमूत्र्त होकर रहो।

आप की प्रैक्टिकल दिनचर्या में बहुत कर के विघ्न रूप क्या होता है? एक शब्द में इसको कहेंगे रोब। इसलिए रुहानी रुहाब नहीं आता है। प्रवृत्ति में जो रोब रखते हो मैं रचयिता हूँ वा व्यवहार का भी जो रोब रहता है, सम्बन्ध में भी मुख्य विघ्न रोब आता है। इसका त्याग करना है। सेवाधारी रोब नहीं दिखाते। इसलिए रोब का त्याग करना है। यह है मुख्य त्याग। हिम्मत तो है ना त्याग की। 19-07-1971

अपने को त्याग तपस्वीमूर्त समझते हो? सबसे बडे ते बड़ा मेहनत का त्याग कौन-सा है? (देह अभिमान) ज्ञान का अभिमान वा बुद्धि का अभिमान भी क्यों आता है? पुराने संस्कारों का त्याग भी क्सों नहीं होता है, उसका मुख्स कारण देह अभिमान है। देह अभिमान को छोड़ना, बड़े ते बड़ा त्याग है जो हर सेकेण्ड अपने आपको चेक

करना पड़ता है। और जो स्थूल त्याग है वह कोई एक बार त्याग करने के बाद किनारा कर लेते हैं लेकिन यह जो देह अभिमान का त्याग है वह हर सेकेण्ड देह का आधार लेते रहना है लेकिन यहॉ सिर्फ रहते हुए न्यारा बनना है। इसी कारण हर सेकेण्ड देह के साथ आत्मा का गहरा सम्बन्ध होने कारण देह का अभिमान भी बहुत गहरा हो गया है। अब इसको मिटाने के लिए मेहनत लगती है। अपने आप से पूछो कि सब प्रकार का त्याग किया है? क्योंकि जितना त्याग करेंगे उतना ही भाग्य प्राप्त करेंगे। वर्तमान समय में वा भविष्य में भी। ऐसे नहीं समझना कि संगमयुग में सिर्फ त्याग करना है और भवि में भाग्य लेना है। ऐसे नहीं है। जो जितना त्याग करता है और जिस घड़ी त्याग करता है उसी घड़ी जितना त्याग उनके रिटर्न में उनको भाग्य जरुर प्राप्त होता है। संगमयुग में त्याग वा प्रत्यक्षरुप में भाग्य क्या मिलता है, यह जानते हो? अभी-अभी भाग्य क्या मिलता है? सतयुग में तो मिलेगा जीवन-मुक्ति पद, अब क्या मिलता है? आपको अपने त्याग का भाग्य मिलता है, संगमयुग में त्याग का प्रत्यक्षरुप में भाग्य क्या मिलता है, यह जानते हो? अभी-अभी भाग्य क्या मिलता है? सतयुग में तो मिलेगा जीवनमुक्ति पद, अब क्या मिलता है? आपको अपने त्याग का भाग्य मिलता है, संगमयुग में त्याग का भाग्य बड़े ते बड़ा यही मिलता है कि स्वयं भाग्य बनाने वाला अपना बन जाता है। यह सबसे बड़ा भाग्य हुआ ना! यह सिर्फ संगमयुग पर ही प्राप्त होता है जो स्वयं भगवान अपना बन जाता है। अगर त्याग नहीं तो बाप भी अपना नहीं। देह का भान है तो क्या बाप याद है? बाप के समीप सम्बन्ध का अनुभव होता है जब देहभान का त्याग करते हो तो। देहभान का त्याग करने से ही देहीअभिमानी बनने से पहली प्राप्ति क्या होती है? यही ना कि निरन्तर बाप की स्ममृति में रहते हो अर्थार्तिषत हर सेकेण्ड के त्याग से हर सेकेण्ड के लिए बाप के सर्व सम्बन्ध का, सर्व शक्तियों का अपने साथ अनुभव करते हो। तो यह सबसे बड़ा भाग्य नहीं? यह भविष्य में नहीं मिलेगा। इसलिए कहा जाता है यह सहज ज्ञान और सहज राजयोग भविष्य फल नहीं लेकिन प्रत्यक्षफल देने वाला है। भविष्य तो वर्तमान के साथ-साथ बांधा हुआ ही है लेकिन सर्व श्रेष्ठ भाग्य सारे कल्प के अन्दर और कहां नहीं प्राप्त करते हो। इस समय ही त्याग और तपस्या से बाप का हर

सेकेण्ड का अनुभव करते हो अर्थात् बाप को सर्व सम्बन्धों से अपना बना लेते हो। पुकार यह नहीं करते थे। पुकारते तो कुछ और थे लेकिन प्राप्ति क्या हो गई? जो नसंकल्प, न स्वप्न में था वह प्राप्ति हो रही है ना? तो जो न संकल्प, न स्वप्न में बात हो वह प्राप्त हो जाए इसको कहा जाता है भग्य। जो चीज मेहनत से प्राप्त होती है उसको भाग्य नहीं कहा जाता है। स्वत: ही मिलने का असम्भव से सम्भव हो जाता है, न उम्मीदवार से उम्मीदवार हो जाते हैं, इसलिए इसको कहा जाता है भाग्य।

सदैव यह सोचो कि अगर देहभान का त्याग नहीं करेंगे अर्थात् देही अभिमानी नहीं बनेंगे तो भाग्या भी अपना नहीं बना सकेंगे अर्थात् संगमयुग का जो श्रेष्ठ भाग्य है उनसे वंचित रहेंगे। अगर मानो सारे दिन में कुछ समय देह-अभिमान का त्याग रहता है और कुछ समय नीचे रहते हैं अर्थात् देह के भान का त्याग नहीं तो उतना ही संगमयुग में श्रेष्ठ भाग्य से वंचित होते हैं। भाग्य बनाने वाला बाप जब हर सेकेण्ड भाग्य बनाने की विधि सुना रहे हैं तो क्या करना चाहिए? उसी विधि से सर्व सिद्धियों को प्राप्त करना चाहिए। विधि को न अपनाने कारण क्या रिजल्ट होती है? न अवस्था की वृद्धि होती है और न सर्व प्राप्तियों की सिद्धि होती है। तो क्या करना चाहिए? विधाता द्वारा मिली हुई विधियों को सदा अपनाना चाहिए जिससे वृद्धि भी होगी और सिद्धि भी होगी। तो चेक करो–संकल्प के रुप में व्यर्थ संकल्प का कहां तक त्याग किया है? वृत्ति सदा भाई-भाई की रहनी चाहिए उस वृति को कहां तक अपनाया है और देह में देहधारीपन की वृति का कहां तक त्याग किया है?

तो जिससे स्नेह होता है तो स्नेही के स्नेह में त्याग कोई बड़ी बात नहीं होती है। विकारों के स्नेह में आकर अपनी सुध-बुद्ध का भी त्याग तो अपने शरीर का भी त्याग किया। बच्चों के स्नेह में माँ तन का भी त्याग करती है ना। जब देहधारी के सम्बन्ध के स्नेह में अपना ताज, तख्त और अपना असली स्वरुप सब छोड़ दिया ना, तो जब अभी बाप के स्नेही बने हो तो क्या यह देह-अभिमान का त्याग नहीं कर सकते हो? मुश्किल है? सोचना चाहिए कि अल्पकाल के सम्बन्ध में इतनी शक्ति थी जो ऊपर से नीचे ला दिया। ऊपर से नीचे इसीलिए आये हो ना और अब बाप जब कहते हैं और बाप से सर्व सम्बन्ध जोड़े हैं तो क्या बाप के स्नेह में यह उल्टा देह अभिमान

का त्याग कोई बड़ी बात है? छोटी बात है ना! फिर भी क्यों नहीं कर पाते हो? यह तो एक सेकेण्ड में कर देना चाहिए। बच्चा अगर एक मास बीमार होता है तो मां का जो अल्पकाल का सम्बन्ध है, देह का सम्बन्ध है फिर भी मां एक मास के लिए सब कुछ त्याग कर देती है। देह की स्मृति सुख त्याग करने में देरी नहीं करती। मुश्किल भी नहीं समझती है। तो यहां क्या करना चाहिए? यहां तो सदाकाल का सम्बन्ध और सर्व सम्बन्ध है, सर्व प्राप्ति का सम्बन्ध है, तो यहा एक सेकेण्ड भी त्याग करने में देरी नहीं करना चाहिए। लेकिन कितने वर्ष लगाया है? देह का भान त्याग करने में कितना वर्ष लगाया है? कितने वर्ष हो गये? (३६) लगना चाहिए एक सेकेण्ड और लगाया है ३६ वर्ष (आधाकल्प का अभ्यास पड़ा हुआ है) और वह जो आधाकल्प देहभान से और विकारों से न्यारे थे वह आधाकल्प का अभ्यास एक सेकेण्ड में भूल गया? इसमें टाइम लगा क्या? (त्रेता में भी दो कला कम हो जाती हैं) फिर भी विकारों से परे तो रहते हो ना। सतयुग, त्रेता में निर्विकारी तो थे ना। दो कला कम होने के बाद भी त्रेता में निर्विकारी तो कहेंगे ना। विकारों के आकर्षण से परे थे ना। यह भी आधा कल्प के संस्कार हो गये तो वह क्यों नहीं स्मृति में जल्दी आते हैं?

संगमयुग में लौकिक सुहाग का त्याग श्रेष्ठ भाग्य की निशानी है। आत्मा की प्रवृति में यह सम्बन्ध नहीं है। प्रवृति में सम्बन्ध में तो नहीं आती हो? अगर प्रवृति में रह आत्मा के सम्बन्ध में रहती हो तो अपना डबल भाग्य बना सकती हो। प्रवृति में रहते देह के सम्बन्ध से न्यारी रहती हो? तो प्रवृति में रहने वाले ऐसा भाग्य बना रहे हो। अच्छा- ओम् शान्ति। 15-03-1972

स्वयं के त्याग से औरों का भाग्य बनता है। जहाँ स्वयं का त्याग नहीं वहाँ औरों का भाग्य नहीं बनता। बाप ने स्वयं का त्याग किया, तभी तो आप अनेक आत्माओं का भाग्य बना। तो शुरु की स्थिति में स्वयं के सभी सुखों का त्याग था इससे यह भाग्य बने। अब जितना त्याग, उतना भाग्य बना रहे हो औरों का। इसलिए वारिस छिप गये हैं। तो अब फिर से वही महादानी बनने का संस्कार व सदा सर्व प्राप्ति होते हुए भी और सर्व साधन होते हुए भी साधन में न आओ, साधना में रहो।

अभी साधना कम है, साधन ज्यादा हैं। पहले साधन कम थे, साधना ज्यादा थी। इसलिए अभी निरन्तर उस साधना में रहो अर्थात् साधन होते हुए भी त्याग वृत्ति में रहो। जिससे थोड़े समय में ऊंची आत्माओं का भाग्य बना सको। बापदादा सभी के हाथ में अब आत्माओं के भाग्य की रेखा लगाने की अथॉरिटी (authority) दी है। तो ऐसा न हो कि अपने त्याग की कमी के कारण अनेक आत्माओं के भाग्य की रेखा सम्पन्न न कर सको। बहुत जिम्मेवारी है। 08-05-1973

आप हरेक लाइट हाउस और माइट हाउस की स्थिति में होंगे तो एक स्थान पर स्थित होते हुए भी विश्व के चारों ओर अपनी लाइट और माइट देने का कर्तव्य करेंगे। इसमें भी विश्व-महाराजन् बनने वाले लाइट और माइट हाउस होंगे। राजपद पाने वालों के सम्पर्क में आने वाले, साहूकार व प्रजा लाइट हाउस नहीं होगी, बल्कि लाइट स्वरूप होगी। लाइट और माइट हाउस दोनों में अन्तर है। विश्व महाराजन् बनने के लिए जब तक विश्व सेवक नहीं बने हैं तब तक विश्व महाराजन् नहीं बन सकते। विश्व महाराजन् बनने के लिए तीन स्टेजिस से पार करना पड़ता है। पहली स्टेज एक सेकेण्ड में बेहद का त्यागी – सोच करते समय गंवाने वाले नहीं, लेकिन झट से और एक धक से बाप पर बलिहार जाने वाले। दूसरी बात – बेहद के निरन्तर अथक सेवाधारी और तीसरी बातसदैव बेहद के वैराग्यवृति वाले। बेहद के त्यागी, बेहद के सेवाधारी और बेहद के वैरागी। इन तीनों स्टेजिस से पार करने वाले ही विश्व-महाराजन् बन सकते हैं। साथ ही अन्त में लाइट हाउस और माइट हाउस बन सकते हैं। अपने आपको चैक करो कि तीनों स्टेजिस में से कौन-सी स्टेज तक पहुँचे हैं? स्वयं ही स्वयं का जज बनो। धर्मराजपुरी में जाने से पहले जो स्वयं, स्वयं का जज बनता है वही धर्मराजपुरी की सजा से बच जाता है। 29-07-1975

जब पुराने वृक्ष को बीमारी लग गई, जड़जड़ीभूत हो गया तो अब नया वृक्ष-आरोपण आप आधार मूर्तियों द्वारा ही होगा। ब्राह्मण हैं ही नये वृक्ष की जड़ें अर्थात् फाउण्डेशन, आप हो फाउण्डेशन। तो देखा कि फाउण्डेशन कितना पॉवरफुल निमित्त बना हुआ है। ब्रह्मा बाप को चारों ओर की दुर्दशा देखते हुए संकल्प आया कि अभी-

अभी बच्चों के तपस्वी रूप द्वारा योग अग्नि द्वारा इस पुराने वृक्ष को भस्म कर लें। इतने में तपस्वी-रूप ब्राह्मण व रूहानी सेना इमर्ज (Emerge) की। सब तपस्वी रूप में अपने-अपने यथा शक्ति फोर्स (शक्ति) लगा रहै थे। योग्य अग्नि प्रज्जवलित हुई दिखाई दे रही थी। संगठन रूप में योग अग्नि का प्रभाव अच्छा जरूर था: लेकिन विश्व के विनाश अर्थ विशाल रूप नहीं था। फोर्स था लेकिन फुलफोर्स नहीं था। अर्थात् सर्व ब्राह्मणों के नम्बर अनुसार यथा-शक्ति फुल स्टेज जो हर ब्राह्मण को अपने-अपने नम्बर प्रमाण सम्पूर्ण अर्थात् फुल स्टेज प्राप्त करनी थी उसमें फुल नहीं थे अर्थात् सम्पन्न नहीं थे इस लिये फुलफोर्स नहीं था, जो एक धक से विनाश हो जाए व पुराना वृक्ष भस्म हो जाय। अब क्या करेंगे? ब्रह्मा बाप को संकल्प को साकार में लाओ। बाप स्नेही बन इस विशाल कार्य में सहयोगी बनो। लेकिन कब नहीं, अभी से ही स्वयं को सम्पन्न बनाओ। समझा? अच्छा। 19-10-1975

टीचर्स अर्थात् सेवाधारी। सेवाधारी अर्थात् त्याग और तपस्वी-मूत्र्त। टीचर्स को अपने अन्दर महीन रूप से चैकिंग करनी चाहिए। मोटे रूप से नहीं बल्कि महीन रूप से। वह यही है कि सारे दिन में सर्व प्रकार के त्याग-मूत्र्त रहै अथवा कहीं त्याग-मूत्र्त के बजाय कोई भी साधन व कोई भी वस्तु को स्वीकार करने वाले बनें? जो त्याग-मूत्र्त होगा वह कभी भी कोई वस्तु स्वीकार नहीं करेगा। जहाँ स्वीकार करने का संकल्प आया तो वहाँ तपस्या भी समाप्त हो जावेगी। त्याग, तपस्या-मूत्र्त जरुर बनावेगा। जहाँ त्याग और तपस्या खत्म वहाँ सेवा भी खत्म। बाहर से कोई कितने भी रूप से सेवा करे, परन्तु त्याग और तपस्या नहीं तो सेवा की भी सफलता नहीं।

कई टीचर्स सोचती है कि सर्विस में सफलता क्यों नहीं? सर्विस में वृद्धि न होना वह तो और बात है, परन्तु विधि-पूर्वक चलना यह है सर्विस की सफलता। तो वह तब होगी जब त्याग और तपस्या होगी। मैं टीचर हूँ, मैं इन्चार्ज हूँ, मैं ज्ञानी हूँ या योगी हूँ यह स्वीकार करना, इसको भी त्याग नहीं कहैंगे। दूसरा भले ही कहै, परन्तु स्वयं को स्वयं न कहै। अगर स्वयं को स्वयं कहते हैं तो इसको भी स्व-अभिमान ही कहैंगे। तो त्याग की परिभाषा साधारण नहीं यह मोटे रूप का त्याग तो प्रजा बनने

वाली आत्मायें भी करती हैं, परन्तु जो निमित्त बनते हैं उनका त्याग महीन रूप में है। कोई भी पोज़ीशन को या कोई भी वस्तु को किसी व्यक्ति द्वारा भी स्वीकार न करना – यह है त्याग। नहीं तो कहावत है कि जो सिद्धि को स्वीकार करते तो वह करामत खैर खुदाई। तो यहाँ भी कोई सिद्धि को स्वीकार किया जो ज्ञानयोग से प्राप्त हुआ मान व शान तो यह भी विधि का सिद्धि-स्वरूप प्रालब्ध ही है। तो इनमें से किसी को भी स्वीकार करना अर्थात् सिद्धि को स्वीकार करना हुआ। जो सिद्धि को स्वीकार करता है, उसकी प्रारब्ध यहाँ ही खत्म फिर उसका भविष्य नहीं बनता। तो टीचर्स की चैकिंग बड़ी महीन रूप से हो। सेवाधारी के नाते से त्याग और तपस्या निरन्तर हो। तपस्या अर्थात् एक बाप की लगन में रहना। कोई भी अल्पकाल के प्राप्त हुए भाग्य में यदि बुद्धि का झुकाव है तो वह सेवा में सफलतामूर्त्त नहीं बन सकता। सफलतामूर्त्त बनने के लिये त्याग और तपस्या चाहिए। त्याग का मतलब यह नहीं कि सम्बन्ध छोड़ यहाँ आकर बैठे। नहीं! महिमा का भी त्याग, मान का भी त्याग और प्रकृति दासी का भी त्याग – यह है त्याग। फिर देखो मेहनत कम सफलता ज्यादा निकलेगी। अभी मेहनत ज्यादा, सफलता कम क्यों? क्योंकि अभी इन दोनों बातों में अर्थात् त्याग और तपस्या की कमी है। जिसमें त्याग-तपस्या दोनों हैं वह है यथार्थ टीचर अर्थात् काम करने वाला टीचर। नहीं तो नाम-मात्र का टीचर ही कहेंगे। 20-10-1975

जो अति प्रिय वस्तु होती है, वह समीप स्थान पर होती है। वह स्थान है – एक नैन और दूसरा दिल। तो दिल में समाने वाले श्रेष्ठ हैं या नैनों में समाने वाले श्रेष्ठ हैं? दोनों में नम्बर वन कौन? दोनों का महत्व एक है या अलग-अलग? जो समझते हैं दोनों का महत्व एक है अथवा जो दिल में होते सो नैनों में होते हैं, वे हाथ उठाओ। जो समझते हैं कि दोनों का महत्व अलग-अलग है, नैनों में समाने वाले अलग, दिल में समाने वाले अलग वे हाथ उठाओ। एक होते हुए भी अलग-अलग महत्व है इसलिए दोनों ही ठीक हैं। जब इतने त्यागी और तपस्वी बच्चे अपने अनेक धर्मों और अपनी देह के धर्म के कर्म में हरेक रस्म का त्याग कर बापदादा की याद की तपस्या

में लगे हुए हैं, ऐसे त्यागी और तपस्वी बच्चों को फ़ेल कैसे कर सकते हैं, इसलिए सदा पास हैं। 05-01-1977

टीचर्स अर्थात् सेवाधारी। सेवा में सफ़लता का मुख्य साधन है – त्याग और तपस्या। दोनों में से अगर एक की भी कमी है तो सेवा की सफ़लता में भी इतने परसेन्ट कमी होती है। त्याग अर्थात् मन्सा संकल्प से भी त्याग, सरकमस्टेंस (Circumstances;परिस्थिति) के कारण या मर्यादा के कारण मजबूरी से त्याग बाहर से कर भी लेंगे तो संकल्प से त्याग नहीं होगा। त्याग अर्थात् ज्ञान-स्वरूप से संकल्प से भी त्याग, मजबूरी से नहीं। ऐसे त्यागी और तपस्वी अर्थात् सदा बाप की लग्न में लवलीन, प्रेम के सागर में समाए हुए, ज्ञान, आनन्द, सुख, शान्ति के सागर में समाये हुए को ही कहेंगे – तपस्वी। ऐसे त्याग तपस्या वाले ही सेवाधारी कहे जाते हैं। ऐसे सेवाधारी हो ना? त्याग ही भाग्य है। बिना त्याग के भाग्य नहीं बन सकता। इसको कहा जाता है टीचर। तो नाम और काम दोनों टीचर के हैं। केवल नाम टीचर का नहीं। टीचर अर्थात् पोजीशन नहीं, लेकिन सेवाधारी। टीचर्स अर्थात् सभी को पोजिशन दिलाने वाली, न कि पोजीशन समझ उसमें अपने को नामधारी टीचर समझने वाली। जेसे कहा जाता है देना, देना नहीं लेकिन लेना है – ऐसे ही टीचर अपने पोजिशन का त्याग करती है तो यही भाग्य लेना है। अच्छा। 12-01-1977

अपने को ब्रह्मा-मुखावंशावली ब्राह्मण समझते हो ना? ब्राह्मणों का धर्म और कर्म क्या है, वह जानते हो? धर्म अर्थात् मुख्य धारणा है – सम्पूर्ण पवित्रता। सम्पूर्ण पवित्रता की परिभाषा जानते हो? संकल्प व स्वप्न में भी अपवित्रता का अंशमात्र भी न हो? ऐसी श्रेष्ठ धारणा करने वाले ही सच्चे ब्राह्मण कहलाते हैं, इसी धारणा के लिए ही गायन है ‘प्राण जाएं पर धर्म न जाए।’ ऐसी हिम्मत, ऐसा दृढ़ निश्चय करने वाले अपने को समझते हो? किसी भी प्रकार की परिस्थिति में अपने धर्म अर्थात् धारणा के प्रति कुछ त्याग करना पड़े, सहन करना पड़े, सामना करना पड़े साहस रखना पड़े तो खुशी-खुशी से करेंगे? पीछे हटेंगे नहीं? घबरायेंगे नहीं?

त्याग को त्याग न समझ भाग्य अनुभव करना, इसको कहा जाता है – सच्चा त्याग। अगर संकल्प में, वाणी में भी इस भावना का बोल निकलता है कि मैंने यह त्याग किया, तो उसका भाग्य नहीं बनता। जैसे भक्ति मार्ग में भी जब बलि चढ़ाते हैं, तो वह बलि चढ़ाने वाला पशु ज़रा भी आवाज़ करता या चिल्लाता है, तो वह महाप्रसाद नहीं माना जाता; व बलि नहीं मानी जाती यह भी अभी का यादगार चल रहा है। अगर त्याग करने के साथ यह संकल्प उठा कि मैंने त्याग किया; नाम, मान, शान का आया तो वह त्याग नहीं, उसे भाग्य नहीं कहेंगे। ऐसी धारणा वाले ही सच्चे ब्राह्मण कहलाते हैं। 28-01-1977

बापदादा श्रेष्ठ आत्माओं को सदा श्रेष्ठ नज़र से देखते हैं। श्रेष्ठ तकदीर की रेखाएं देखते हैं। यही आत्माएं विश्व के सामने चमकते हुए सितारे हैं। विश्व आपके कल्प पहले वाले सम्पन्न-स्वरूप, पूज्य-स्वरूप का सुमिरण कर रहा है, इसलिए अपने सम्पन्न स्वरूप प्रैक्टीकल में प्रख्यात करो। बीती हुई कमज़ोरियों पर फुल स्टाप लगाआ तब सम्पन्न रूप का साक्षात्कार होगा। सब पुराने संस्कार और स्वभाव दृढ़ संकल्प रूपी आहुति से समप्त करो। दूसरों की कमज़ोरी की नकल मत करो। अवगुण धारण करने वाली बुद्धि का नाश करो, दिव्य गुण धारण करने वाली सतोप्रधान बुद्धि धारण करो। अधिकारी और सत्कारी दोनों का बैलेन्स बराबर रखना है। दूसरों की कमज़ोरी को विस्तार में नहीं लाओ और अपनी कमज़ोरी को छिपाओ नहीं। सफ़लता में स्वयं और असफ़लता में दूसरों को दोषी मत बनाओ। शान और मान का त्याग, साधनों का त्याग यही महान त्याग है। 05-02-1977-Part-2

जैसे बाप नाम रूप से न्यारे हैं तो सबसे अधिक नाम का गायन बाप का है - वैसे ही अल्पकाल के नाम और मान से न्यारे बनो तो सदाकाल के लिए सर्व के प्यारे स्वत: बन जायेंगे। नाम और मान के भिखारीपन का अंशमात्र भी त्याग करो – ऐसे त्यागी विश्व के भाग्य विधाता बन सकते। कर्म का फल खाने के अभ्यासी ज्यादा हैं - इसलिए कच्चा फल खा लेते हैं – जमा होने अर्थात् पकने नहीं देते। कच्चा फल खाने से क्या होता है ? कोई न कोई हलचल हो जायेगी। ऐसे ही स्थिति में हलचल हो

जाती है। कर्म का फल तो स्वत: ही आपके सामने सम्पन्न स्वरूप में आयेगा। एक श्रेष्ठ कर्म करने का सौ गुणा सम्पन्न फल के स्वरूप में आयेगा लेकिन अल्पकाल की इच्छा मात्रम् अविद्या हो। त्याग करो तो भाग्य आपे ही आपके पीछे आयेगा। इच्छा - अच्छा कर्म समाप्त कर देती है। इसलिए इच्छा मात्रम् अविद्या। इस विद्या की अविद्या। 27-11-1978

ऐसी-ऐसी गुप्त गोपिकायें भी हैं, जो लौकिक में हाफ पार्टनर कहलाती हैं लेकिन बाप के साथ सौदा करने में फुल पार्टनर हैं। ऐसी सच्ची दिल वाली फ़राख़दिल गोपिकायें भी हैं तो पाण्डव भी हैं। सुनाया ना-आज ऐसे बच्चों के नाम गिन रहे थे। ऐसे भी एकनामी कर अलौकिक कार्य में फ़राख़दिल से लगाते हैं। अपने आराम का समय भी, अपने आराम के लिए नहीं, धन का हिस्सा होते हुए भी ७५ अलौकिक कार्य में लगाते हैं और निमित्त मात्र लौकिक कार्य को निभाते हैं। ऐसे त्यागवान बच्चे सदा अवि- नाशी भाग्यवान हैं। लेकिन ऐसे युक्तियुक्त पार्ट बजाने वाले ज्यादा संख्या में नहीं थे। अगुंलियों पर गिनने वाले थे। फिर भी डबल पार्टधारी ऐसी विशेष आत्माओं की महिमा ज़रूर वर्णन हुई।

दूसरे नम्बर के बच्चे भी थे– जो करते भी हैं लेकिन सेकण्ड नम्बर बन जात हैं। इसी गुप्त दान-महादान, गुप्त महादानी की विशेषता है- त्याग के भी त्यागी। जो श्रेष्ठ कर्म का फल प्राप्त होता है वह प्रत्यक्षफल है– सर्व द्वारा महिमा होना। सेवाधारी को श्रेष्ठ गायन की सीट मिलती है– मान, मर्तबे की सीट मिलती है, यह सिद्धि अवश्य प्राप्त होती है। क्योंकि यह सिद्धियाँ रास्ते की चट्टियाँ हैं, यह फाइनल मंजिल नहीं है, इसलिए इसके त्यागवान, भाग्यवान बनो। इसको कहा जाता है– महात्यागी। 23-11-1981

आज भाग्य विधाता बापदादा अपने सर्व बच्चों के त्याग और भाग्य दोनों को देख रहे हैं। त्याग क्या किया है और भाग्य क्या पाया है- यह तो जानते ही हो कि एक गुणा त्याग उसके रिटर्न में पदमगुणा भाग्य मिलता है। त्याग की गुह्य परिभाषा जानते हुए भी जो बच्चे थोड़ा भी त्याग करते हैं तो भाग्य की लकीर स्पष्ट और बहुत बड़ी हो

जाती है। त्याग की भी भिन्न-भिन्न स्टेज हैं। वैसे तो ब्रह्माकुमार वा ब्रह्माकुमारी बने तो यह भी त्याग का भाग्य ब्राह्मण जीवन मिली। इस हिसाब से जैसे ब्राह्मण सभी कहलाते हो वैसे त्याग करने वाली आत्मा भी सब हो गये। लेकिन त्याग में भी नम्बर हैं। इसलिए भाग्य पाने में भी नम्बर हैं। ब्राह्मकुमार वा ब्रह्माकुमारी तो सब कहलाते हो लेकिन ब्रह्माकुमार-कुमारियों में से ही कोई माला का नम्बरवन दाना बना कोई लास्ट दाना बना-लेकिन हैं दोनों ही ब्रह्माकुमार-कुमारी। शूद्र जीवन सबने त्याग की फिर भी नम्बरवन और लास्ट का अन्तर क्यों? चाहे प्रवृत्ति में रह ट्रस्टी बन चल रहे हो, चाहे प्रवृत्ति से निवृत्त हो सेवाधारी बन सदा सेवाकेन्द्र पर रहे हुए हो लेकिन दोनों ही प्रकार की ब्राह्मण आत्मायें चाहे ट्रस्टी, चाहे सेवाधारी, दोनों ही नाम एक ही ब्रह्मा कुमार-कुमारी कहलाते हो। सरनेम दोनों का एक ही है लेकिन दोनों का त्याग के आधार पर भाग्य बना हुआ है। ऐसे नहीं कह सकते कि सेवाधारी बन सेवाकेन्द्र पर रहना यही श्रेष्ठ त्याग वा भाग्य है। ट्रस्टी आत्मायें भी त्याग वृत्ति द्वारा माला में अच्छा नम्बर ले सकती हैं। लेकिन सच्चे और साफ दिल वाला ट्रस्टी हो। भाग्य प्राप्त करने का दोनों को अधिकार है। लेकिन श्रेष्ठ भाग्य की लकीर खींचने का आधार है-''श्रेष्ठ संकल्प और श्रेष्ठ कर्म।'' चाहे ट्रस्टी आत्मा हो चाहे सेवाधारी आत्मा हो दोनों इसी आधार द्वारा नम्बर ले सकते हैं। दोनों को फुल अथार्टी है भाग्य बनाने की। जो बनाने चाहें, जितना बनाना चाहें बना सकते हैं। 01-04-1982

बपदादा अपने त्यागमूर्त बच्चों को देख रहे हैं। र एक ब्राह्मण आत्मा त्याग स्वरुप है- लेकिन जैसे भाग्य का सुनाया ना कि एक बाप के बच्चे होते, एक जैसा भाग्य का वर्सा मिलते, सम्भालने और बढ़ाने के आधार पर नम्बर बन जाते हैं। ऐसे सम्भालने और बढ़ने के आधार पर नम्बर बन जाते हैं। त्याग किया त्याग मूर्त तो सभी बनें। लेकिन त्याग की परिभाषा बड़ी गुह्य है। कहने में तो सभी एक बात कहते कि तन-मन-धन, सम्बन्ध सब का त्याग कर लिया। लेकिन तन का त्याग अर्थात् देह के भान का त्याग। तो देह के भान का त्याग हो गया है वा वो रहा है? त्याग का अर्थ है किसी भी चीज को वा बात को छोड़ दिया, अपने-पन से किनारा कर लिया, अपना

अधिकार समाप्त हुआ। जिसके प्रति त्याग किया वह वस्तु उसकी हो गई। जिस बात का त्याग किया वह वस्तु उसकी हो गई। जिस बात का त्याग किया उसका फिर संकल्प भी नहीं कर सकते- क्योंकि त्याग की हुई बात, संकल्प द्वारा प्रतिज्ञा की हुई बात फिर से वापिस नहीं ले सकते हो। जैसे हद के सन्यासी अपने घर का, सम्बन्ध का त्याग करके जाते हैं और अगर फिर वापिस आ जाएं तो उसको क्या कहा जायेगा! नियम प्रमाण वापिस नहीं आ सकते। ऐसे आप ब्राह्मण बेहद के सन्यासी वा त्यागी हो। आप त्याग मूर्तियों ने अपने इस पुराने घर अर्थात् पुराने शरीर, पुराने देह का भान त्याग किया, संकल्प किया कि बुद्धि द्वारा फिर से कब इस पुराने घर में आकर्षित नहीं होंगे। संकल्प द्वारा भी फिर से वापिस नहीं आयेंगे। पहला-पहला यह त्याग किया। इसलिए तो कहते हो देह सहित देह के सम्बन्ध का त्याग। देह के भान का त्याग। तो त्याग किए हुए पुराने घर में फिर से वापिस तो नहीं आ जाते हो! वायदा किया है? पहला शब्द ''तन'' आता है। जैसे तन-मन-धन कहते हो देह और देह के सम्बन्ध कहते हो। तो पहला त्याग क्या हुआ? इस पुराने देह के भान से विस्मृति अर्थात् किनारा। पहला कदम है त्याग का। जैसे घर में घर की सामग्री (सामान) होती है, ऐसे इस देह रुपी घर में भिन्न-भिन्न कर्मेन्द्रियां ही सामग्री हैं। तो घर का त्याग अर्थात् सर्व का त्याग। घर को छोड़ा लेकिन कोई एक चीज में ममता रह गई तो उसको त्याग कहेंगे? ऐसे कोई भी कर्मेन्द्रिय अगर अपने तरफ आकर्षित करती है तो क्या उसको सम्पूर्ण त्याग कहेंगे? इसी प्रकार अपनी चेंकिग करो।

ऐसे अलबेले नहीं बनना कि और तो सब छोड़ दिया बाकी कोई एक कर्मेन्द्रिय विचलित होती है वह भी समय पर ठीक हो जायेगी। लेकिन कोई एक कर्मेन्द्रिय की आकर्षण भी एक बाप का बनने नहीं देगी। एकरस स्थिति में स्थित होने नहीं देगी। नम्बरवन में जाने नहीं देगी। अगर कोई हीरे-जवाहर, महल-माड़िया छोड़ दे और सिर्फ कोई मिट्टी के फूटे हुए बर्तन में भी मोह रह जाए तो क्या होगा? जैसे हीरा अपनी तरफ आकर्षिण रही हुई है तो श्रेष्ठ पद पाने से बार-बार नीचे ले आयेगी। तो पुराने घर और पुरानी सामग्री सबका त्याग चाहिए। ऐसे नहीं समझो यह तो बहुत थोड़ा है, लेकिन यह थोड़ा भी बहुत कुछ गंवाने वाला है, सम्पूर्ण त्याग चाहिए। इस पुरानी

देह को बापदादा द्वारा मिली हुई अमानत समझो। सेवा अर्थ कार्य में लगाना है। यह मेरी देह नहीं लेकिन सेवा अर्थ अमानत है। जैसे मेहमान बन देह में रह रहें हैं। थोड़े समय के लिए बापदादा ने कार्य के लिए आपको यह तन दिया है। तो आप क्या बन गये? मेहमान! मेरे-पन का त्याग और मेहमान समझ महान कार्य में लगाओ। मेहमान को क्या याद रहता है। असली घर याद रहता है या उसी में फंस जाते हो! तो आप सबका यह शरीर रुपी घर भी यह फरिश्ता स्वरुप है, फिर देवता स्वरुप है। उसको याद करो। इस पुराने शरीर में ऐसे ही निवास करो जैसे बापदादा पुराने शरीर का आधार लेते हैं लेकिन शरीर में फंस नहीं जाते हैं। कर्म के लिए आधार लिया और फिर अपने फरिश्ते स्वरुप में स्थित हो जाओ। अपने निराकारी स्वरुप में स्थित हो जाओ। न्यारेपन की उपर की ऊंची स्थिति से नीचे साकार कर्मेन्द्रियों द्वारा कर्म करने लिए आओ, इसको कहा जाता है मेहमान अर्थात् महान। ऐसे रहते हो? त्याग का पहला कदम पूरा किया है?

त्याग मूर्त बनने का पहला कदम फालो फादर के समान किया है? ब्रह्मा बाप को देखा, सुना- संकल्प में, मुख में सदैव क्या रहा? यह बाप का रथ है। तो आपका रथ किसका है? क्या सिर्फ ब्रह्मा ने रथ दिया वा आप लोगों ने भी रथ दिया? ब्रह्मा का प्रवेशता का पार्ट अलग है लेकिन आप सबने भी तन तेरा कहा- न कि तन मेरा। आप सबका भी वायदा है जैसे चलाओ, जहां बिठाओ... यह वायदा है ना? वा आंख को मैं चलाऊंगा बाकी को बाप चलायें? कुछ मनमत पर चलेंगे, कुछ श्रीमत पर चलेंगे। ऐसा वायदा है ना? तो कोई भी कर्मेन्द्रिय के वशीभूत होना यह श्रीमत है वा मनतम है? तो समझा, त्याग की परिभाषा कितनी गुह्य है! इसलिए नम्बर बन गये हैं। अभी तो सिर्फ देह के त्याग की बात सुनाई है। आगे और बहुत हैं। अभी तो त्याग की सीढ़ियां भी बहुत हैं यह पहली सीढ़ी की बात कर रहें हैं। त्याग मुश्किल तो नहीं लगता? सबको छोड़ना पड़ेगा। अगर पुराने के बदले नया मिल जाए तो मुश्किल है क्या! अभी-अभी मिलता है। भविष्य मिलना तो कोई बड़ी नहीं लेकिन अभी-अभी पुराना भान छोड़ो, फरिश्ता स्वरुप लो। जब पुरानी दुनिया के देह का भान छोड़ देते हो

तो क्या बन जाते हो? डबल लाइट। अभी ही बनते हो। परन्तु अगर न यहाँ के न वहां के रहते हो तो मुश्किल लगता है। न पूरा छोड़ते हो न पूरा लेते हो तो अधमरे हो जाते हो, इसलिए बार-बार लम्बा श्वास उठाते हो। कोई भी बात मुश्किल होती तो लम्बा श्वास उठता है। मरने में जो मजा है-लेकिन पूरा मरो तो। लेने में कहते हो पूरा लेंगे और छोड़ने में मिट्टी के बर्तन भी नहीं छोड़गें। इसलिए मुश्किल हो जाता है। वैसे तो अगर कोई मिट्टी का बर्तन रखता है तो बाप दादा रखने भी दें, बाप को क्या परवाह है। भल रखो। लेकिन स्वयं ही परेशान होते हो। इसलिए बापदादा कहते हैं छोड़ो। अगर कोई भी पुरानी चीज रहते हो तो रिजल्ट क्या होती है? बार-बार बुद्धि भी उन्हों की भटकती है। फरिश्ता बन नहीं सकते। इसलिए बापदादा तो और भी हजारों मिट्टी के बर्तन दे सकते हैं- कितना इकट्ठा कर लो। लेकिन जहाँ किचड़ा होगा वहाँ क्या पैदा होंगे? मच्छर! और मच्छर किसको काटेंगे? तो बापदादा बच्चों के कल्याण के लिए ही कहते हैं पुराना छोड़ दो। अधमरे नहीं बनो। मरना है तो पूरा मरो, नहीं तो भले ही जिंदा रहो। मुश्किल है नहीं लेकिन मुश्किल बना देते हो। कभी-कभी मुश्किल हो जाता है। जब रावण कि सिर लग जाते हैं तो मुश्किल होता है। जब भुजाधारी शक्ति बन जाते हो तो सहज हो जाता है। सिर्फ एक कदम सहयोग देना और पदम कदमों का सहयोग मिलना हो जाता। लेकिन पहले जो एक कदम देना पड़ता है उसमें घबरा जाते हो। मिलना भूल जाता है, देना याद आ जाता है। इसलिए मुश्किल अनुभव होता है। अच्छा-

03-04-1982

बापदादा राजऋषियों की दरबार देख रहें हैं। राज अर्थात् अधिकारी और ऋषि अर्थात् सर्व त्यागी। त्यागी और तपस्वी। तो बापदादा सर्व ब्राह्मण बच्चों को देख रहें हैं कि कहां तक अधिकारी आत्मा और साथ-साथ महात्यागी आत्मा- दोनों का जीवन में प्रत्यक्ष स्वरुप कहां तक लाया है! अधिकारी और त्यागी दोनों का बैलेन्स हो। दोनों ही इकट्ठे हो सकता है? स्व का अधिकार अर्थात् स्वराज्य पा सकते हो? त्याग किया तब स्वराज्य अधिकारी बने। यह तो अनुभव है ना!

त्याग का पहला कदम है देह भान का त्याग। जब देह के भान का त्याग हो जाता है तो दूसरा है देह के सर्व सम्बन्ध का त्याग। जब देह का भान छूट जाता तो क्या बन जाते? आत्मा, देही वा मालिक बन गये। देह के बन्धन से मुक्त अर्थात जीवनमुक्त राज्य अधिकारी। जब राज्य अधिकारी बन गये तो सर्व प्रकार की अधीनता समाप्त हो जाती। क्योकि देह के दास से देह के मालिक बन गये। ऐसा अन्तर अनुभव किया ना! दासपन छूट गया। 06-04-1982

आज बापदादा अपने महादानी वरदानी विशे ष आत्माओं को देख रहे हैं। महादानी वरदानी बनने का आधार है - महात्यागी बनने के बिगर महादानी वरदानी नहीं बन सकते। महादानी अर्थात् मिले हुए खज़ाने बिना स्वार्थ के सर्व आत्माओं प्रति देने वाले - नि:स्वार्थी। स्व के स्वार्थ से परे आत्मा ही महादानी बन सकती है। वरदानी, सदा स्वयं में गुणों, शक्तियों और ज्ञान के खज़ाने से सम्पन्न आत्मा सदा सर्व आत्माओं प्रति श्रेष्ठ और शुभ भावना तथा सर्व का कल्याण हो, ऐसी श्रेष्ठ कामना रखने वाली सदा रूहानी रहमदिल, फराखदिल, ऐसी आत्मा वरदानी बन सकती है। इसके लिए महात्यागी बनना आवश्यक है। त्याग की परिभाषा भी सुनाई है कि पहला त्याग है - अपने देह की स्मृति का त्याग। दूसरा देह के सम्बन्ध का त्याग। देह के सम्बन्ध में पहली बात कर्मेन्द्रियों के साथ है। इन्द्रियों जीत बनना, अधिकारी आत्मा बनना यह दूसरा कदम।

अब तीसरी बात यह है देह के साथ व्यक्तियों के सम्बन्ध की। इसमें लौकिक तथा अलौकिक सम्बन्ध आ जाता है। इन दोनों सम्बन्ध में महात्यागी अर्थात् नष्टोमोहा। नष्टोमोहा की निशानी - दोनों सम्बन्धों में न किसी में घृणा होगीं न किसी में लगाव वा झुकाव होगा। अगर किसी से घृणा है तो उस आत्मा के अवगुण वा आपके दिलपसन्द न करने वाले कर्म बार-बार आपकी बुद्धि को विचलित करेंगे, न चाहते भी संकल्प में, बोल में, स्वप्न में भी उसी का उल्टा चिन्तन स्वत: ही चलेगा। याद बाप को करेंगे और सामने आयेगी वह आत्मा। जैसे दिल के झुकाव में लगाव वाली आत्मा न चाहते भी अपने तरफ आकर्षित कर ही लेती है। वह गुण और स्नेह के रूप में बुद्धि को

आकर्षित करती है और घृणा वाली आत्मा स्वार्थ की पूर्ति न होने के कारण स्वार्थ बुद्धि को विचलित करता है। जब तक स्वार्थ पूरा नहीं होता तब तक उस आत्मा के साथ विरोधी संकल्प वा कर्म का हिसाब समाप्त नहीं होता।

घृणा का बीज है स्वार्थ का रॉयल स्वरूप - ''चाहिए''। इसको यह करना चाहिए, यह न करना चाहिए, यह होना चाहिए। तो चाहिए की चाह उस आत्मा से व्यर्थ सम्बन्ध जोड़ देती है। घृणा वाली आत्मा के प्रति सदा व्यर्थ चिन्तन होने कारण परदर्शन चक्रधारी बन जाते। लेकिन यह व्यर्थ सम्बन्ध भी नष्टोमोहा होने नहीं देंगे। मुहब्बत से मोह नहीं होगा लेकिन मजबूरी से। फिर क्या कहते हैं। मैं तो तंग हो गई हूँ। तो जो तंग करता है उसमें बुद्धि तो जायेगी ना। समय भी जायेगा, बुद्धि भी जायेगी और शक्तियाँ भी जायेंगी। तो एक है यह सम्बन्ध। दूसरा है विनाशी स्नेह और प्राप्ति के आधार पर वा अल्पकाल के लिए सहारा बनने के कारण लगाव वा झुकाव। यह भी लौकिक, अलौकिक दोनों सम्बन्ध में बुद्धि को अपनी तरफ खींचता है। जैसे लौकिक में देह के स्म्बन्धियों द्वारा स्नेह मिलता है, सहारा मिलता है, प्राप्ति होती है तो उस तरफ विशेषार्थ करते हो, लक्ष्य रखते हो कि किसी भी तरफ बुद्धि न जाए। लौकिक को छोड़ने के बाद अलौकिक सम्बन्ध में भी यही सब बातें बुद्धि को आर्का करती हैं। अर्थात् बुद्धि का झुकाव अपनी तरफ सहज कर लेती हैं। यह भी देहधारी के ही सम्बन्ध हैं। जब कोई समस्या जीवन में आयेगी, दिल में कोई उलझन की बात होगी तो न चाहते भी अल्पकाल के सहारे देने वाले वा अल्पकाल की प्राप्ति कराने वाले, लगाव वाली आत्मा ही याद आयेगी। बाप याद नहीं आयेगा। फिर से ऐसे लगाव लगाने वाली आत्मायें अपने आपको बचाने के लिए वा अपने को राइट सिद्ध करने के लिए क्या सोचती और बोलती हैं कि बाप तो निराकार और आकार है ना! साकार में कुछ चाहिए जरूर। लेकिन यह भूल जाती हैं अगर एक बाप से सर्व प्राप्ति का सम्बन्ध, सर्व सम्बन्धों का अनुभव और सदा सहारे दाता का अटल विश्वास है, निश्चय है तो बापदादा निराकार आकार होते भी स्नेह के बन्धन में बांधे हुए हैं। साकार रूप की भासना देते हैं। अनुभव न होने का कारण? नॉलेज द्वारा यह समझा है कि सर्व सम्बन्ध एक बाप से रखने हैं लेकिन जीवन में सर्व सम्बन्धों को नहीं लाया है।

इसलिए साक्षात् सर्व सम्बन्ध की अनुभूति नहीं कर पाते हैं। जब भक्ति मार्ग में भक्त माला की शिरोमणी मीरा को भी साक्षात्कार नहीं लेकिन साक्षात् अनुभव हुआ तो क्या ज्ञान सागर के डायरेक्ट ज्ञान स्वरूप बच्चों को साकार रूप में सर्व प्राप्ति के आधार मूर्त, सदा सहारे दाता बाप का अनुभव नहीं हो सकता! तो फिर सर्व शक्तिवान को छोड़ यथा शक्ति आत्माओं को सहारा क्यों बनाते हो! यह भी एक गुह्य कर्मों का हिसाब बुद्धि में रखो। कर्मों का हिसाब कितना गुह्य है - इसको जानो। किसी भी आत्मा द्वारा अल्पकाल का सहारा लेते हो वा प्राप्ति का आधार बनाते हो, उसी आत्मा के तरफ बुद्धि का झुकाव होने के कारण कर्मातीत बनने के बजाए कर्मों का बन्धन बंध जाता है। एक ने दिया दूसरे ने लिया - तो आत्मा का आत्मा से लेन-देन हुआ। तो लेन-देन का हिसाब बना वा समाप्त हुआ? उस समय अनुभव ऐसे करेंगे जैसे कि हम आगे बढ़ रहे हैं लेकिन वह आगे बढ़ना, बढ़ना नहीं, लेकिन कर्म बन्धन के हिसाब का खाता जमा किया। रिजल्ट क्या होगी! कर्म-बन्धनी आत्मा बाप से सम्बन्ध का अनुभव कर नहीं सकेगी। कर्मबन्धन के बोझ वाली आत्मा याद की यात्रा में सम्पूर्ण स्थिति का अनुभव कर नहीं सकेगी, वह याद के सबजेक्ट में सदा कमजोर होगी। नॉलेज सुनने और सुनाने में भल होशियार, सेन्सीबुल होगी लेकिन इसेन्सफुल नहीं होगी। सर्विसएबुल होगी लेकिन विघ्न विनाशक नहीं होगी। सेवा की वृद्धि कर लेंगे लेकिन विधिपूर्वक वृद्धि नहीं होगी। इसलिए ऐसी आत्मायें कर्म बन्धन के बोझ कारण स्पीकर बन सकती हैं लेकिन स्पीड में नहीं चल सकती अर्थात् उड़ती कला की स्पीड का अनुभव नहीं कर सकती। तो यह भी दोनों प्रकार के देह के सम्बन्ध हैं जो महात्यागी नहीं बनने देंगे। तो सिर्फ पहले इस देह के सम्बन्ध को चेक करो किसी भी आत्मा से चाहे घृणा के सम्बन्ध में, चाहे प्राप्ति वा सहारे के सम्बन्ध से लगाव तो नहीं है अर्थात् बुद्धि का झुकाव तो नहीं है। बार-बार बुद्धि का जाना वा झुकाव सिद्ध करता है कि बोझ है। बोझ वाली चीज झुकती है। तो यह भी कर्मों का बोझ बनता है इसलिए बुद्धि का झुकाव न चाहते भी वहाँ ही होता है। समझा - अभी तो एक देह के सम्बन्ध की बात सुनाई।

तो अपने आप से पूछो - कि देह के सम्बन्ध का त्याग किया? वा लौकिक से त्याग कर अलौकिक में जोड़ लिया? कर्मातीत बनने वाली आत्मायें, इस कर्म के बन्धन का भी त्याग करो। तो ब्राह्मणों के लिए इस सम्बन्ध का त्याग ही त्याग है। तो समझा त्याग की परिभाषा अभी और आगे सुनायेंगे। यह त्याग का सप्ताह कोर्स चल रहा है। आज का पाठ पक्का हुआ? ब्राह्मणों की विशेषता है ही महात्यागी। त्याग के बिना भाग्य पा नहीं सकते। ऐसे तो नहीं समझते ब्रह्माकुमार-कुमारी हो गये तो त्याग हो गया? ब्रह्माकुमार-ब्रह्माकुमारी के लिए त्याग की परिभाषा गुह्य हो जाती है। समझा। अच्छा -

08-04-1982

ब्राह्मण अर्थात् श्रेष्ठ। तो श्रेष्ठ क्या है - सुकर्म या साधारण कर्म? जब ब्राह्मण साधारण कर्म भी नहीं कर सकते तो विकर्म की तो बात ही नहीं। विकर्माजीत अर्थात् विकर्म, विकल्प के त्यागी। कर्मेन्द्रियों के आधार से कर्म के बिना रह नहीं सकते। तो देह का सम्बन्ध कर्मेन्द्रियों से है और कर्मेन्द्रियों का सम्बन्ध कर्म से है। यह देह और देह के सम्बन्ध के त्याग की बात चल रही है। कर्मेन्द्रियों का जो कर्म के साथ सम्बन्ध है - उस कर्म के हिसाब से विकर्म का त्याग। विकर्म के त्याग बिना सुकर्मी वा विकर्माजीत बन नही सकते। विकर्म की परिभाषा अच्छी तरह से जानते हो। किसी भी विकार के अंशमात्र के वशीभूत हो कर्म करना अर्थात् विकर्म करना है। विकारों के सूक्ष्म स्वरूप, रॉयल स्वरूप दोनों को अच्छी तरह से जानते हो और इसके ऊपर पहले भी सुना दिया है कि ब्राह्मणों के रॉयल रूप के विकार का स्वरूप क्या है। अगर रॉयल रूप में विकार है वा सूक्ष्म अंशमात्र है तो ऐसी आत्मा सदा सुकर्मी बन नहीं सकती।

अमृतवेले से लेकर हर कर्म में चेक करो कि सुकर्म किया वा व्यर्थ कर्म किया वा कोई विकर्म भी किया? सुकर्म अर्थात् श्रीमत के आधार पर कर्म करना। श्रीमत के आधार पर किया हुआ कर्म स्वत:ही सुकर्म के खाते में जमा होता है। तो सुकर्म और विकर्म को चेक करने की विधि यह सहज है। इस विधि के प्रमाण सदा चेक करते चलो। अमृतवेले के उठने के कर्म से लेकर रात के सोने तक हर कर्म के

लिए श्रीमत मिली हुई है। उठना कैसे है, बैठना कैसे है, सब बताया हुआ है ना! अगर वैसो नहीं उठते तो अमृतवेले से श्रेष्ठ कर्म की श्रेष्ठ प्रालब्ध बना नहीं सकते। अर्थात् व्यर्थ और विकर्म के त्यागी नहीं बन सकते। तो इस सम्बन्ध का भी त्याग। व्यर्थ का भी त्याग करना पड़े।

कई समझते हैं कि कोई विकर्म तो किया नहीं। कोई भूल तो की नहीं। कोई ऐसा बोल तो बोला नहीं। लेकिन व्यर्थ बोल, समर्थ बनने नहीं देंगे। अर्थात् श्रेष्ठ भाग्यवान बनने नहीं देंगे। अगर विकर्म नहीं किया लेकिन व्यर्थ कर्म भी किया तो वर्तमान और भविषार्थ के उमंग उत्साह में आते हैं कि हम भी ऐसे बन सकते हैं। तो अपने प्रति प्रत्यक्षफल और दूसरों की सेवा। डबल जमा हो गया। और वर्तमान के हिसाब से भविष्य तो जमा हो ही जाता है। इस हिसाब से देखो कि अगर व्यर्थ अर्थात् साधारण कर्म भी किया तो कितना नुकसान हुआ। तो ऐसे कभी नहीं सोचो कि साधारण कर्म किया - यह तो होता ही है। श्रेष्ठ आत्मा का हर कदम श्रेष्ठ, हर कर्म श्रेष्ठ, हर बोल श्रेष्ठ होगा। तो समझा त्याग की परिभाषा क्य हुई! व्यर्थ अर्थात् साधारण कर्म, बोल, समय, इसका भी त्याग कर सदा समर्थ, सदा अलौकिक अर्थात् पदमापदम भाग्यवान बनो। तो व्यर्थ और साधारण बातों को भी अण्डरलाइन करो। इसके अलबेलेपन का त्याग। क्योंकि आप सभी ब्राह्मण आत्माओं का विश्व के मंच पर हीरो और हीरोइन का पार्ट है। ऐसी हीरो पार्टधारी आत्माओं का एक-एक सेकण्ड, एक-एक संकल्प, एक-एक बोल, एक-एक कर्म हीरे से भी ज्यादा मूल्यवान है। अगर एक संकल्प भी व्यर्थ हुआ तो जैसे हीरे को गँवाया। अगर कीमती से कीमती हीरा किसका गिर जाए, खो जाए तो वह सोचेगा ना - कुछ गँवाया है। ऐसे एक हीरे की बात नहीं। अनेक हीरों की कीमत का एक सेकण्ड है। इस हिसाब से सोचो। ऐसे नहीं कि साधारण रूप में बैठे-बैठे साधारण बातें करते-करते समय बिता दो। फिर क्या कहते - कोई बुरी बात तो नहीं की, ऐसे ही बातें कर रहे थे, ऐसे ही बैठे थे, बातें कर रहे थे। ऐसे ही चल रहे थे। यह ऐसे-ऐसे करते भी कितना समय चला जाता है। ऐसे ही नहीं लेकिन हीरे जैसे है। तो अपने मूल्य को जानो। आपके जड़ चित्रों का कितना मूल्य है। एक सेकण्ड के दर्शन का भी मूल्य है। आपके एक संकल्प का भी

इतना मूल्य है जो आज तक उसको वरदान के रूप में माना जाता है। भक्त लोग यही कहते हैं कि एक सेकण्ड का सिर्फ दर्शन दे दो। तो दर्शन 'समय' की वैल्यु है, वरदान 'संकल्प' की वैल्यु, आपके बोल की वैल्यु - आज भी दो वचन सुनने के लिए तड़पते हैं। आपके दृश्टि की वैल्यु आज भी नज़र से निहाल कर लो, ऐसे पुकारते रहते हैं। आपके हर कर्म की वैल्यु है। बाप के साथ श्रेष्ठ कर्म का वर्णन करते गदगद होते हैं। तो इतना अमूल्य है आपका हर सेकण्ड, हर संकल्प। तो अपने मूल्य को जान व्यर्थ और विकर्म वा विकल्प का त्याग। तो आज त्याग का पाठ क्या पक्का किया? ''ऐसे ही ऐसे'' शब्द के अलबेलेपन का त्याग। जैसे कहते हैं आजकल की चालू भाषा। तो ब्राह्मणों की भी आजकल चालू भाषा यह हो गई है। यह चालू भाषा छोड़ दो। हर सेकण्ड अलौकिक हो। हर संकल्प अलौकिक अर्थात् अमूल्य हो। वर्तमान और भपिष्य डबल फल पाला हो। जैसे देखा है नपा - कभी-कभी एक में दो इकट्ठे फल होते हैं। दो फल इकट्ठे निकल जाते हैं। तो आप श्रेष्ठ आत्माओं का सदा डबल फल है अर्थात् डबल प्राप्ति है। भविष्य के पहले वर्तमान प्राप्ति है। और वर्तमान के आधार पर भविष्य प्राप्ति है। तो समझा - डबल फल खाओ। सिंगल नहीं। अच्छा –

11-04-1982

बापदादा सर्व ब्राह्मण आत्माओं में सर्वस्व त्यागी बच्चों को देख रहे हैं। तीन प्रकार के बच्चे हैं - एक हैं त्यागी, दूसरे हैं महात्यागी, तीसरे हैं सर्व त्यागी, तीनों ही त्योगी लेकिन नम्बरवार हैं।

त्यागी - जिन्होंने ज्ञान और योग के द्वारा अपने पुराने सम्बन्ध, पुरानी दूनिया, पुराने सम्पर्क द्वारा प्राप्त हुई अल्पकाल की प्राप्तियों को त्याग कर ब्राह्मण जीवन अर्थात् योगी जीवन संकल्प द्वारा अपनाया है अर्थात् यह सब धारणा की कि पुरानी जीवन से यह योगी जीवन श्रेष्ठ है। अल्पकाल की प्राप्ति से यह सदाकाल की प्राप्ति प्राप्त करना आवश्यक है। और उसे आवश्यक समझने के आधार पर ज्ञान योग के अभ्यासी बन गये। ब्रह्माकुमार वा ब्रह्माकुमारी कहलाने के अधिकारी बन गये। लेकिन ब्रह्माकुमारी कुमारी बनने के बाद भी पुराने सम्बन्ध, संकल्प और संस्कार सम्पूर्ण

परिवर्तन नहीं हुए लेकिन परिवर्तन करने के युद्ध में सदा तप्पर रहते। अभी-अभी ब्राह्मण संस्कार, अभी-अभी पुराने संस्कारों को परिवर्तन करने के युद्ध स्वरूप में। इसको कहा जाता है त्यागी बने लेकिन सम्पूर्ण परिवर्तन नहीं किया। सिर्फ सोचने और समझने वाले हैं कि त्याग करना ही महा भाग्यवान बनना है। करने की हिम्मत कम। अलबेलेपन के संस्कार बार-बाहर इमर्ज होने से त्याग के साथ-साथ आराम पसन्द भी बन जाते हैं। समझ भी रहे हैं, चल भी रहे हैं, पुरुषार्थ कर भी रहे हैं, ब्राह्मण जीवन को छोड़ भी नहीं सकते, यह संकल्प भी दृढ़ है कि ब्राह्मण ही बनना है। चाहे माया वा मायावी सम्बन्धी पुरानी जीवन के लिए अपनी तरफ आकर्षित भी कर सकते हैं तो भी इस संकल्प में अटल हैं कि ब्राह्मण जीवन ही श्रेष्ठ हैं। इसमें निश्चयबुद्धि पक्के हैं। लेकिन सम्पूर्ण त्यागी बनने के लिए दो प्रकार के विघ्न आगे बढ़ने नहीं देते। वह कौन से? एक तो सदा हिम्मत नहीं रख सकते अर्थात् विघ्नों का सामना करने की शक्ति कम है। देसरा – अलबेलेपन का स्वरमप आराम पसन्द बन चलना। पढ़ाई, याद, धारणा और सेवा सब सबजेक्ट में कर रहे हैं, चल रहे हैं, पढ़ रहे हैं लेकिन आराम से! सम्पूर्ण परिवर्तन करने के लिए शस्त्रधारी शक्ति स्वरूप की कमी हो जाती है। स्नेही हैं लेकिन शक्ति स्वरूप नहीं। मास्टर सर्वशक्तिवान स्वरूप में स्थित नहीं हो सकते हैं। इसलिए महात्यागी नहीं बन सकते हैं। यह हैं त्यागी आत्मायें।

महात्यागी - सदा सम्बन्ध, संकल्प और संस्कार सभी के परिवर्तन करने के सदा हिम्मत और उल्लास में रहते। पुरानी दुनिया, पुराने सम्बन्ध से सदा न्यारे हैं। महात्यागी आत्मायें सदा यह अनुभव करती कि यह पुरानी दुनिया वा सम्बन्धी मरे ही पड़े हैं। इसके लिए युद्ध नहीं करनी पड़ती है। सदा स्नेही, सहयोगी, सेवाधारी शक्ति स्वरूप की स्थिति में स्थित रहते हैं, बाकी क्या रह जाता है! महात्यागी के फलस्वरूप जो त्याग का भाग्य है - महाज्ञानी, महायोगी, श्रेष्ठ सेवाधारी बन जाते हैं! इस भाग्य के अधिकार को कहाँ-कहाँ उल्टे नशे के रूप में यूज़ कर लेते हैं। पास्ट जीवन का सम्पूर्ण त्याग है लेकिन त्याग का भी त्याग नहीं है। लोहे की जंजीरे तो तोड़ दीं, आइरन एजड से गोल्डन एजड तो बन गये, लेकिन कहाँ-कहाँ परिवर्तन सुनहरी जीवन के सोने की जंजीर में बंध जाता है। वह सोने की जंजीरें क्या है? ''मैं'' और

‘‘मेरा’’। मैं अच्छा ज्ञानी हूँ, मैं ज्ञानी तू आत्मा, योगी तू आत्मा हूँ। यह सुनहरी जंजीर कहाँ-कहाँ सदा बन्धनमुक्त बनने नहीं देती। तीन प्रकार की प्रवृत्ति है - (१) लौकिक सम्बन्ध वा कार्य की प्रवृत्ति (२) अपने शरीर की प्रवृत्ति और (३) सेवा की प्रवृत्ति।

तो त्यागी जो हैं वह लौकिक प्रवृत्ति से पार हो गये लेकिन देह की प्रवृत्ति अर्थात् अपने आपको ही चलाने और बनाने में व्यस्त रहना वा देह भान की नेचर के वशीभूत रहना और उसी नेचर के कारण ही बार-बार हिम्मतहीन बन जाते हैं। जो स्वयं भी वर्णन करते कि समझते भी हैं, चाहते भी हें लेकिन मेरी नेचर है। यह भी देह भान की, देह की प्रवृत्ति है। जिसमें शक्ति स्वरूप हो इस प्रवृत्ति से भी निवृत्त हो जाएं - वह नहीं कर पाते। यह त्यागी की बात सुनाई लेकिन महात्यागी लौकिक प्रवृत्ति, देह की प्रवृत्ति दोनों से निवृत्त हो जाते - लेकिन सेवा की प्रवृत्ति में कहाँ-कहाँ निवृत्त होने के बजाए फंस जाते हैं। ऐसी आत्माओं को अपनी देह का भान भी नहीं सताता क्योंकि दिन-रात सेवा में मगन हैं। देह की प्रवृत्ति से तो पार हो गये। इस दोनों ही त्याग का भाग्य - ज्ञानी और योगी बन गये, शक्तियों की प्राप्ति, गुणों की प्राप्ति हो गई। ब्राह्मण परिवार में प्रसिद्ध आत्मायें बन गये। सेवाधारियों में वी.आई.पी.बन गये। महिमा के पुर्षा शुरू हो गई। माननीय और गायन योग्य आत्मायें बन गये लेकिन यह जो सेवा की प्रवृत्ति का विस्तार हुआ, उस विस्तार में अटक जाते हैं। यह सर्व प्राप्ति भी महादानी बन औरों को दान करने के बजाए स्वयं स्वीकार कर लेते हैं। तो मैं और मेरा शुद्ध भाव की सोने की जंजीर बन जाती है। भाव और शब्द बहुत शुद्ध होते हैं कि हम अपने प्रति नहीं कहते, सेवा के प्रति कहते हैं। मैं अपने को नहीं कहती कि मैं योग्य टीचर हूँ लेकिन लोग मेरी मांगनी करते हैं। जिज्ञासु कहते हैं कि आप ही सेवा करो। मैं तो न्यारी हूँ लेकिन दूसरे मुझे प्यारा बनाते हैं। इसको क्या कहा जायेगा? बाप को देखा वा आपको देखा? आपका ज्ञान अच्छा लगता है, आपके सेवा का तरीका अच्छा लगता है, तो बाप कहाँ गया? बाप को परमधाम निवासी बना दिया! इस भाग्य का भी त्याग। जो आप दिखाई न दें, बाप ही दिखाई दे। महान आत्मा प्रेमी नहीं बनाओ परमात्म प्रेमी बनाओ। इसको कहा जाता है और प्रवृत्ति पार कर इस लास्ट प्रवृत्ति में सर्वांश त्यागी नहीं बनते। यह शुद्ध प्रवृत्ति का अंश रह गया। तो

महाभागी तो बने लेकिन सर्वस्व त्यागी नहीं बने। तो सुना दूसरे नम्बर का महात्यागी। बाकी रह गया सर्वस्व त्यागी। 13-04-1982

अपने को सदा सेवाधारी समझकर सेवा पर उपस्थित रहते हो ना? सेवा की सफलता का आधार, सेवाधारी के लिए विशेष क्या है? जानते हो? सेवाधारी सदा यही चाहते हैं कि सफलता हो लेकिन सफल होने का अधार क्या है? आजकल विशेष किस बात पर अटेन्शन दिला रहे हैं? (त्याग पर) बिना त्याग और तपस्या के सफलता नहीं। तो सेवाधारी अर्थात् त्याग मूर्त और तपस्वी मूर्त। तपस्या क्या है? एक बाप दूसरा न कोई यह है हर समय की तपस्या। और त्याग कौनसा है? उस पर तो बहुत सुनाया है लेकिन सार रूप में सेवाधारी का त्याग - जैसा समय, जैसी समस्यायें हो, जैसे व्यक्ति हों वैसे स्वयं को मोल्ड कर स्व कल्याण और औरों का कल्याण करने के लिए सदा इजी रहें। जैसी परिस्थिति हो अर्थात् कहाँ अपने नाम का त्याग करना पड़े, कहाँ संस्कारों का, कहाँ व्यर्थ संकल्पों का, कहाँ स्थूल अल्पकाल के साधनों का... तो उस परिस्थिति और समय अनुसार अपनी श्रेष्ठ स्थिति बना सकें, कैसा भी त्याग उसके लिए करना पड़े तो कर लें अपने को मोल्ड कर लें इसको कहा जाता है त्याग मूर्त। त्याग तपस्या फिर सेवा। त्याग और तपस्या ही सेवा की सफलता का आधार है। तो ऐसे त्यागी जो त्याग का भी अभिमान न आये कि मैंने त्याग किया। अगर यह संकल्प भी आता तो यह भी त्याग नहीं हुआ।

सेवाधारी अर्थात् बड़ों के डायरेक्शन को फौरन अमल में लाने वाले। लोक संग्रह अर्थ कोई डायरेक्शन मिलता है तो भी सिद्ध नहीं करना चाहिए कि मैं राइट हूँ। भल राइट हो लेकिन लोकसंग्रह अर्थ निमित्त आत्माओं का डायरेक्शन मिलता है तो सदा - 'जी हाँ' 'जी हाज़िर', करना यही सेवाधारियों की विशेषता है यह झुकना नहीं है, नीचे होना नहीं है लेकिन फिर भी ऊंचा जाना है। कभी-कभी कोई समझते हैं अगर मैंने किया तो मैं नीचे हो जाऊंगी, मेरा नाम कम हो जायेगा, मेरी पर्सनैलिटी कम हो जायेगी, लेकिन नहीं। मानना अर्थात् माननीय बनना, बड़ों को मान देना अर्थात् स्वमान लेना। तो ऐसे सेवाधारी हो जो अपने मान शान का भी त्याग कर दो। अल्पकाल का

मान और शान कया करेंगे। आज्ञाकारी बनना ही सदाकाल का मान और शान लेना है। तो अविनाशी लेना है या अभी-अभी का लेना है तो सेवाधारी अर्थात् इन सब बातों के त्याग में सदा एवररेडी। बड़ों ने कहा और किया। ऐसे विशेष सेवाधारी सर्व के और बाप के प्रिय होते हैं। झुकना अर्थात् सफलता का फलदायक बनना। यह झुकना छोटा बनना नहीं है लेकिन सफलता के फल सम्पन्न बनना है।

उस समय भल ऐसे लगता है कि मेरा नाम नीचे जा रहा है, वह बड़ा बन गया, मैं छोटी बन गई। मेरे को नीचे किया गया उसको ऊपर किया गया। लेकिन होता सेकण्ड का खेल है। सेकण्ड में हार हो जाती और सेकण्ड में जीत हो जाती। सेकण्ड की हार सदा की हार है जो चन्द्रवंशी कमानधारी बना देती है और सेकण्ड की जीत सदा की खुशी प्राप्त कराती जिसकी निशानी श्रीकृष्ण को मुरली बजाते हुए दिखाया है। तो कहाँ चन्द्रवंशी कमानधारी और कहाँ मुरली बजाने वाले। तो सेकण्ड की बात नहीं है लेकिन सेकण्ड का आधार सदा पर है। तो इस राज़ को समझते हुए सदा आगे चलते चलो ब्रह्माबाप को देखा – ब्रह्मा बाप ने अपने को कितना नीचे किया – इतना निर्माण होकर सेवाधारी बना जो बच्चों के पांव दबाने के लिए भी तैयार। बच्चे मेरे से आगे हैं, बच्चे मेरे से भी अच्छा भाषण कर सकते हैं। ''पहले मैं'' कभी नहीं कहा। आगे बच्चे, पहले बच्चे, बड़े बच्चे - कहा तो स्वयं को नीचे करना नीचे होना नहीं है, ऊंचा जाना है। तो इसको कहा जाता है सच्चे नम्बरवन योग्य सेवाधारी। लक्ष्य तो सभी का ऐसा ही है ना। गुजरात से बहुत सेवाधारी निकले हैं लेकिन गुजरात की नदियां गुजरात में ही बह रही हैं, गुजरात कल्याणकारी नहीं, विश्व कल्याणकारी बनो। सदा एवररेडी रहो। आज कोई भी डायरेक्शन मिले - बोलो हाँ जी। क्या होगा कैसे होगा - ट्रस्टी को क्या, कैसे का क्या सोचना। अपनी आफर सदा करो तो सदा उपराम रहेंगे। लगाव झुकाव से किनारा हो जायेगा। आज यहाँ हैं कल कहाँ भी चले जायें तो उपराम हो जायेंगे। अगर समझते, यहाँ ही रहना है तो फिर थोड़ा बनाना है, बनना है... यह रहेगा। आज यहाँ कल वहाँ। पंछी है आज एक डाल पर, कल दूसरी डाल पर तो स्थिति उपराम रहेगी, तो मन की स्थिति सदा उपराम चाहिए। चाहे कहाँ

२० वर्ष भी रहो लेकिन स्वयं सदा एवररेडी स्वयं नहीं सोचो कि कैसे होगा - इसको कहा जाता है महात्यागी। अच्छा - 26-04-1982

बापदादा चारों ओर के सर्व महात्यागी, सर्वंश त्यागी बच्चों को देख रहे हैं। कौन से, कौन से बच्चे इस महान भाग्य को प्राप्त कर रहे हैं वा समीप पहुँच गये हैं – ऐसे समीप अर्थात् समान, श्रेष्ठ, सर्वन्श त्यागी बच्चों को बापदादा देख हर्षित होते हैं। सर्वन्श त्यागी बच्चों की विशेषताओं के आधार पर समीप वा समान बनते हैं? साकार तन द्वारा भी लास्ट बोल में तीन विशेषतायें सुनाई थीं:-

१. संकल्प में सदा निराकारी सो साकारी, सदा न्यारी और बाप की प्यारी आत्मायें।
२. वाणी में सदा निरंहकारी अर्थात् सदा रुहानी मधुरता और निर्माणता।
३. कर्म में हर कर्मेन्द्रिय द्वारा निर्विकारी अर्थात् प्युरिटी की पर्सनैलिटी वाली।

तो हर कमेन्द्रिय द्वारा महादानी वा वरदानी। मस्तक द्वारा सर्व को स्वत-स्वरुप की स्मृति दिलाने के वरदानी वा महादानी। नयनों से रुहानी दृष्टि द्वारा सर्व को स्व-देश अर्थात् मुक्तिधाम और स्वराज्य अर्थात् जीवनमुक्ति अपने राज्य का दर्शन कराना वा रास्ता दिखाने का दृष्टि द्वारा ईशारा देना। ऐसा अनुभव कराने का वरदान देना कि जो आत्मायें महसूस करें कि यही महारी असली घर और राज्य है। घर का रास्ता, राज्य पाने का रास्ता मिल गया। ऐसे महादान वा वरदान पाकर सदा हर्षित हो जाएं। मुख द्वारा रचयिता और रचना के विस्तार को स्पष्ट जान स्वयं को रचयिता को पहली रचना श्रेष्ठ ब्राह्मण सो देवता बनने का वरदान पा लें। ऐसे हस्तों द्वारा सदा सहज योगी, कर्मयोगी बनने के वरदान देने वाले श्रेष्ठ कर्मधारी श्रेष्ठ फल प्राप्त करने के वरदानी बनाने वाले। चरण कमल द्वारा हर कदम फालों फादर कर हर कदम में पदमों की कमाई जमा करने के वरदानी। ऐसे हर कमेंन्द्रिय द्वारा विशेष अनुभूति कराने के वरदानी अर्थात निर्विकारी जीवन। यह तीन विशेषतायें सर्वस्व त्यागी की सदा स्पष्ट दिखाई देंगी।

सर्वन्श त्यागी आत्मा किसी भी विकार के अंश के भी वशीभूत हो कोई कर्म नहीं करेगी। विकारों का रायल अंश स्वरुप पहले भी सुनाया है कि मोटे रुप में विकार

समाप्त हो रायल रुप में अंश मात्र के रुप में रह जाते हैं। वह याद है ना! ब्राह्मणों की भाषा भी रायल बन गई है। अभी वह पिस्तार तो बहुत लम्बा है। मैं नही यथार्थ हूँ वा राइट हूँ - ऐसा अपने को सिद्ध करने के रायल भाषा के शब्द भी बहुत हैं। अपनी कमजोरी छिपाकर दूसरे की कमजोरी सिद्ध करने वा स्पष्ट करने का विस्तार करना, उसके भी बहुत रायल शब्द हैं। यह भी बड़ी डिक्शनरी हैं। जो वास्तविकता नहीं है लेकिन स्वयं को सिद्ध करने वा स्वयं की कमजोरियों के बचाव के लिए मनमत के बोल हैं। वह विस्तार अच्छी तरह से सब जानते हो। सर्वन्श त्यागी की ऐसी भाषा नहीं होती - जिसमें किसी भी विकार का अंश मात्र भी समाया हुआ हो। तो मंसा-वाचा कर्मणा, सम्बन्ध-सम्पर्क में सदा विकारों के अंश मात्र से भी परे - इसको कहा जाता है सर्वन्श त्यागी। सर्व अंश का त्याग।

सर्वन्श त्यागी सदा विश्व कल्याणकारी की विशेषता वाले होंगे। सदा दाता का बच्चा दाता बन सर्व को देने की भासना से भरपूर होंगे। ऐसे नहीं कि यह करे वा ऐसी परिस्थिति हो, वायुमण्डल हो तब मैं यह करूँ। दूसरे का सहयोग लेकर के अपने कल्याण के श्रेष्ठ कर्म करने वाले अर्थात् लेकर फिर देले वाले, सहयोग लिया फिर दिया, तो लेना और देना दोनों साथ-साथ हुआ। लेकिन सर्वन्श त्यागी स्वयं मास्टर दाता बन परिस्थितियों को भी परितर्वन करने का, कमजोर को शक्तिशाली बनाने का, वायुमण्डल वा वृत्ति को अपनी शक्तियों द्वारा परिवर्तन करने का, सदा स्वयं को कल्याण अर्थ ज़िम्मेवाद आत्मा समझ हर बात में सहयोग वा शक्ति के महादान वा वरदान देने का संकल्प करेंगे। यह हो तो यह करें, नहीं। मास्टर दाता बन परिवर्तन करने की, शुभ भावना से शक्तियों को कार्य में लगाने अर्थात् देने का कार्य करता रहेगा। मुझे देना है, मुझे करना है, मुझे बदलना है, मुझे निर्माण बनना है। ऐसे ''ओटो सो अर्जुन'' अर्थात् दातापन की विशेषता होगी।

सर्वन्श त्यागी अर्थात् सदा गुण मूर्त। गुण मूर्त का अर्थ है गुणवान बनना और सर्व में गुण देखना। अगर स्वयं गुण मूर्त है तो उसकी दृष्टि और वृत्ति ऐसी गुण सम्पन्न हो जायेगी जो उसकी दृष्टि वृत्ति द्वारा सर्व में जो गुण होगा वही दिखाई देगा। अवगुण देखते, समझते भी किसी का भी अवगुण बुद्धि द्वारा ग्रहण नहीं करेगा। अर्थात् बुद्धि में

धारण नहीं करेगा। ऐसा होलीहंस होगा। कंकड़ को जानते भी ग्रहण नहीं करेगा। और ही उस आत्मा अवगुण को मिटाने के लिए भी स्वयं में प्राप्त हुए गुण की शक्ति द्वारा उस आत्मा को भी गुणगान बनाने में सहयोग होगा। क्योंकि मास्टर दाता के संस्कार हैं।

सर्वन्स त्यागी सदा अपने को हर श्रेष्ठ कार्य के – सेवा की सफलता के कार्य में, ब्राह्मण आत्माओं की उन्नति के कार्य में, कमजोरी वा व्यर्थ वातावरण को बदलने के कार्य में ज़िम्मेवार आत्मा समझेंगे। सेवा में विघ्न बनने के कारण वा सम्बन्घ सम्पर्क में कोई भी नम्बरवार आत्माओं के कारण ज़रा भी हलचल होती है तो सर्वन्श त्यागी बेहद के आधारमूर्त समझ चारों ओर की हलचल को अचल बनाने की जिम्मेवारी समझेंगे। ऐसे बेहद की उन्नति के आधार मूर्त सदा स्वयं को अनुभव करेंगे। ऐसा नहीं कि यह तो इस स्थान की बात है या इस बहन वा भाई की बात है। नहीं। मेरा परिवार है। मैं कल्याणकारी निमित्त आत्मा हूँ। टाइटल विश्व कल्याणकारी का मिला हुआ हैं न कि सिर्फ स्व कल्याणकारी वा अपने सेन्टर के कल्याणकारी। दूसरे की कमज़ोरी अर्थात् अपने परिवार की कमज़ोरी है ऐसे बेहद के निमित्त आत्मा समझेंगे। मैं-पन नहीं निमित्त मात्र हैं अर्थात् विश्व कल्याण के आधारमूर्त बेहद के कार्य के आधारमूर्त हैं।

सर्वन्श त्यागी सदा एकरस, एक मत, एक ही परिवार का एक ही कार्य है – सदा ऐसे एक ही स्मृति में नम्बर एक आत्मा होंगे।

सर्वन्श त्यागी सदा स्वयं को प्रत्यक्षफल प्राप्त भई फल स्वरुप आत्मा अनुभव करेंगे। अर्थात् सर्वन्श त्यागी आत्मा सदा सर्व प्रत्यक्ष फलों से सम्पन्न अविनाशी वृक्ष के समान होगी। सदा फलस्वरुप होंगी। इसलिए हद के कर्म का, हद के फल पाने की अल्पकाल इच्छा से इच्छा मात्रम् अविद्या होंगे। सदा प्रत्यक्ष फल खाने वाले सदा मनदुरुस्त वाले होंगे। सदा स्वस्थ होंगे। कोई भी मन की बीमारी नहीं होगी। सदा मनमनाभव होंगे। तो ऐसे सर्वन्श त्यागी बने हो? तीनों ही विशेषता सामने रख स्वयं से पूछो कि मैं कौनसा त्यागी हूँ! कहाँ तक पहुँचे हैं? कितनी पौड़ियाँ चढ़ करके बाप समान की मंजिल पर पहुँचे हैं? फुल स्टैप तक पहुँचे हो या अभी कुछ

स्टैप तक पहुँचे हो? सात कोर्स में से कितने कोर्स किये हैं? सप्ताह पाठ का लास्ट में भोग पड़ता है - तो बापदादा भरी अभी भोग डाले? आप लोग तो हर गुरूवार को भोग लगाते हो लेकिन बापदादा तो महाभोग करेंगे ना। जैसे सन्देशियाँ ऊपर वतन में भोग ले जाती हैं - तो बापदादा भी कहाँ ले जायेंगे! पहले स्वयं को भोग में समर्पण करो। भोग भी बाप के आगे समर्पण करो। तब महाभोग होगा। अपने आपको सम्पन्न बनाकर आफर करो। सिर्फ स्थूल भोग की आफर नहीं करो। सम्पन्न आत्मा बन स्वयं को आफर करो। समझा -

सर्वस्व त्यागी आत्मा के लक्षण:-

१. सर्वस्व त्यागी आत्मा किसी भी विकार के अंश के भी वशीभूत हो काई कर्म नहीं करेगा।

२. सर्वस्व त्यागी आत्मा सदा दाता का बच्चा बन सर्व को देने की भावना से सम्पन्न होगा।

३. सर्वस्व त्यागी आत्मा सदा गुण-मूर्त होगा। स्वयं भी गुणवान और सर्व में गुण देखेगा।

४. सर्वस्व त्यागी आत्मा चारों ओर की हलचल समाप्त करने की जिम्मेदारी समझेगा।

५. सदा एक रस, एक मत, एक ही परिवार का कार्य है – ऐसा समझेगा।

६. सदा फल स्वरुप होगा। 28-04-1982

सेवाधारी टीचर्स बहनों के प्रति:- टीचर्स अर्थात् सेवाधारी। सेवाधारी अर्थात् त्यागमूत्र और तपस्या मूत्र। जहाँ त्याग, तपस्या नहीं वहाँ सफलता नहीं। त्याग और तपस्या दोनों के सहयोग से सेवा में सदा सफलता मिलती है। तपस्या है ही एक बाप दूसरा न कोई। यह है निरन्तर की तपस्या। तो जो भी आये वह कुमारी नहीं देखे लेकिन तपस्वी कुमारी देखे। जिस स्थान पर रहते हो वह तपस्याकुण्ड अनुभव हो। अच्छा स्थान है, पवित्र स्थान है यह भी ठीक लेकिन तपस्या कुण्ड अनुभव हो। तपस्या कुण्ड में जो भी आयेगा वह स्वयं भी तपस्वी हो जायेगा। तो तपस्या के प्रैक्टिकल

स्वरूप में जाओ। तब जयजयकार होगी। तपस्या के आगे झुकेंगे। ब्रह्माकुमार के आगे महिमा करते हैं तपस्वी कुमार के अगो झुकेंगे। तपस्या कुण्ड बनाओ फिर देखो कितने परवाने आपेही आ जाते हैं। तपस्या भी ज्योति है, ज्योति पर परवाने आपेही आयेंगे। सेवाधारी बनने का भाग्य बन चुका अब तपस्वी कुमारी का नम्बर लो। सदा शान्ति का दान देने वाली महादानी आत्मायें बनो। बापदादा वर्तमान समय मंसा सेवा के ऊपर विशेष अटेन्शन दिलाते हैं। वाचा की सेवा से इतनी शक्तिशाली आत्मायें प्रत्यक्ष होंगी। वाणी तो चलती रहती है लेकिन अभी एडीशन चाहिए शुद्ध संकल्प के सेवा की। तो स्वरूप बन करके स्वरूप बनाने की सेवा करो अभी इसी की आवश्यकता है। अभी सबका अटेन्शन इस पाईट पर हो। इसी से नाम बाला होगा। अनुभवी मूर्त्त अनुभव करा सकेंगे। इसी पर विशेष अटेन्शन देते रहो। इसी से मेहनत कम सफलता ज्यादा होगी। मंसा धरनी को परिवर्तन कर देती है। सदा इसी प्रकार से वृद्धि करते रहो। अभी यही विधि है वृद्धि करने की। अच्छा 13-04-1983

बाप द्वारा निमित्त बने हुए शिक्षक वा सेवा के सहयोगी बनी हुई आत्मायें चाहे बहन हो या भाई हो, लेकिन सेवाधारी आत्माओं के सेवा के मुख्य लक्षण त्याग और तपस्या हैं, इसी लक्षण के आधार पर सदा त्यागी और तपस्वी की दृष्टि से देखो न कि दैहिक दृष्टि से। श्रेष्ठ परिवार है तो सदा श्रेष्ठ दृष्टि रखो। क्योंकि यह महापाप कभी प्राप्ति स्वरूप का अनुभव करा नहीं सकता। सदा ही कोई न कोई कर्म में, संकल्प में, सम्बन्ध-सम्पर्क में डिफेक्ट वा इफेक्ट इसी उतराई और चढ़ाई में चलता रहेगा। कभी भी परफेक्ट स्थिति का अनुभव नहीं कर सकेगा। इसलिए सदा याद रखो पूज्य आत्मा के बदले पाप आत्मा तो नहीं बन गये। इसी एक विकार से और विकार स्वत: ही पैदा हो जाते हैं। 09-05-1983

परात्म प्यार सदा बापदादा के साथ अर्थात् परामात्मा को साथी अनुभव कराता है। परमात्मा प्यार मेहनत से छुड़ाए सहज और सदा के योगी, योगयुक्त स्थिति का अनुभव कराता है। परमात्म प्यार सहज ही तीन मंजिल पार करा देता है।

१. देह-भान की विस्मृति। २. देह के सर्व सम्बन्धें की विस्मृति। ३. देह की, देह की दुनिया की अल्पकाल की प्राप्ति की आकर्ष- णमय पदार्थों का आकर्षण सहज समाप्त हो जाता है। त्याग करना नहीं पड़ता लेकिन श्रेष्ठ सर्व प्राप्ति का भाग्य स्वत: ही त्याग करा देता है। तो आप प्रभु प्रेमी बच्चों ने त्याग किया वा भाग्य लिया? क्या त्याग किया? अनेक चत्तियां लगा हुआ वस्त्र, जड़जड़ीभूत पुरानी अन्तिम जन्म की देह का त्याग, यह त्याग है? जिसे स्वयं भी चलाने में मजबूर हो, उसके बदले फरिश्ता स्वरुप लाइट का आकार जिसमें कोई व्याधि नहीं, कोई पुराने संस्कार स्वभाव का अंश नहीं, कोई देह का रिश्ता नहीं, कोई मन की चंचलता नहीं, कोई बुद्धि के भटकने की आदत नहीं – ऐसा फरिश्ता स्वरुप, प्रकाशमय काया प्राप्त होने के बाद पुराना छोड़ना, यह छोड़ना हुआ? लिया क्या और दिया क्या? त्या है वा भाग्य है? ऐसे ही देह के स्वार्थी सम्बन्ध, सुख-शान्ति का चैन छीनने वाले विनाशी सम्बन्धी, अभी भाई है अभी स्वार्थवश दुश्मन हो जातो, दु:ख और धोखा देने वाले हो जाते, मोह की रस्सियों में बांधने वाले, ऐसे अनेक सम्बन्ध छोड़ एक में सर्व सुखदाई सम्बन्ध प्राप्त करते तो क्या त्याग किया? सदा लेने वाले सम्बन्ध छोड़े, क्योंकि सभी आत्मायें लेती ही हैं, देते नहीं। एक बात ही दातापन का प्यार देने वाला है, लने की कोई कामना नहीं। चाहे किनी भी धर्मात्मा, महात्मा, पुण्य आत्मा हो, गुप्त दानी हो, फिर भी लेता है, दाता नहीं है। स्नेह भी शुभ लेने की कामना वाला होगा। बाप तो सम्पन्न सागर है इसलिए वह दाता है परमात्म प्यार ही दातापन का प्यार है। इसलिए उनको देना नहीं, लेना है। ऐसे ही विनाशी पदार्थ विषय भोग अर्थात् विष भरे भोग हैं। मेरे-मेरे की जाल में फँसाने वाले विनाशी पदार्थ भोग-भोग क्या बन गये? पिलड़े की पंछी बन गये ना। ऐसे पदार्थ, जिसने कखपति बना दिया, उसके बदले सर्वश्रेष्ठ पदार्थ देते जो पदमापदमपति बनाने वाले हैं। तो पदम पाकर, कख छोड़ना, क्या यह त्याग हुआ! परमात्म प्यार भाग्य देने वाला है। त्याग स्वत: ही हुआ पड़ा है। ऐसे सहज सदा के त्यागी ही श्रेष्ठ भाग्यवान बनते हैं।

कभी-कभी बाप के आगे कई लाडले ही कहें लाड प्यार दिखाते हैं कि हमने इतना त्याग किया, इतना छोड़ा फिर भी ऐसे क्यों। बापदादा मुस्कराते हुए बच्चों को

पूछते हैं कि छोड़ा क्या और पाया क्या? इसकी लिस्ट निकालो। कौन सा तरफ भारी है – छोड़ने का वा पाने का? आज नहीं तो कल जो छोड़ना ही है, मजबूरी से भी छोड़ना ही पड़ेगा, अगर पहले से ही समझदार बन प्राप्त कर फिर छोड़ा तो वह छोड़ना हुआ क्या! भाग्य के वर्णन के आगे त्याग किया है? बहुत छोड़ना? छोड़ने वाले हो या लेने वाले हो? कभी भी स्वप्न में भी ऐसा संकल्प किया तो क्या होगा? अपने भाग्य की रेखा, मैंने किया, मैंने छोड़ा, इससे लकीर को मिटाने के निमित्त बन जाते। इसलिए स्वप्न में भी कब ऐसा संकल्प नहीं करना। 19-12-1983

स्वराज्य वा विश्व का राज्य प्राप्त करने के लिए विशेष 3 बातों की धारणा द्वारा ही सफलता प्राप्त की है। कोई भी श्रेष्ठ कार्य की सफलता का अधार, त्याग, तपस्या और सेवा है। इन तीनों बातों के आधार पर सफलता होगी वा नहीं होगी यह क्वेश्चन नहीं उठ सकता। जहां तीनों बातों की धारण है वहाँ सेकण्ड में सफला है ही है। हुई पड़ी है। त्याग किस बात का? सिर्फ एक बात का त्याग सर्व त्याग सहज और स्वत: कराता है। वह एक त्याग है – देह भान का त्याग हद के मैं-पन का प्याग सहज करा देता है। यह हद का मैं पन तपस्या और सेवा से वंचित करा देता है। जहाँ हद का मै-पन हैं वहाँ त्याग तपस्या और सेवा हो नहीं सकती। हद का मैंपन, मेरा-पन, इस एक बात का त्याग चाहिए। मैं और मेरा समाप्त हो गया तो बाकी क्या रहा? बेहद का। मैं शुद्ध आत्मा हूँ और मेरा तो एक बाप दूसरा न कोई। मेरा तो एक बाप। तो जहाँ बेहदह का बाप सर्वशक्तिमान हैं, वहाँ सफलता सदा साथ है। इसी त्याग द्वारा तपस्या भी सिद्ध हो गई ना। तपस्या क्या है? मैं एक का हूँ। एक की श्रेष्ठ मत पर चलने वाला हूँ। इसी से एकरस स्थिति स्वत: हो जाती है। सदा एक परमात्मा स्मृति ये ही तपस्या है। एकरस स्थिति ये ही श्रेष्ठ आसन है। कमल पुष्प समान स्थिति यही तपस्या का आसन है। त्याग से तपस्या भी स्वत: ही सिद्ध हो जाती है। जब त्याग और तपस्या स्व्रुप बन गये तो क्या करेंगे? अपने पन का त्याग अथवा मैं-पन समाप्त हो गया। एक की लगन में मगन तपस्वी बन गये तो सेवा के सिवाए रह नहीं सकते। यह हद का मैं और मेरा सच्ची सेवा करने नहीं देता। त्यागी और तपस्वी मूर्त सच्चे

सेवाधारी हैं। मैंने यह किया, मैं ऐसा हूँ, यह देह का भान जरा भी आया तो सेवाधारी के बदले बन जाते? सिर्फ सेवाधारी नामधारी बन जाते। सच्चे सेवाधारी नहीं बनते। सच्ची सेवा का फाउन्डेशन है त्याग और तपस्या। ऐसे त्यागी तपस्वी सेवाधारी सदा सफलता स्वरुप हैं। विजय, सफलता उनके गले की माला बन जाती है। जन्म सिद्ध अधिकारी बन जाता। बापदादा विश्व के सर्व बच्चों को यही श्रेष्ठ शिक्षा देते हैं। कि त्यागी बनो, तपस्वी बनो, सच्चे सेवाधारी बनो।

कुमार अर्थात् सर्व शक्तियों को, सर्व खजानों को जमा कर औरों को भी शक्तिवान बनाने की सेवा करने वाले। सदा इसी सेवा में बिजी रहते हो ना। बिजी रहेंगे तो उन्नति होती रहेगी। अगर थोड़ा भी फ्री होंगे तो व्यर्थ चलेगा। समर्थ रहने के लिए बिजी रहो। अपना टाइमटेबल बनाओ। जैसे शरीर का टाइमटेबल बनाते हैं ऐसे बुद्धि का भी टाइमटेबल बनाओ। बुद्धि से बिजी रहने का प्लैन बनओ। तो बिजी रहने से सदा उन्नति को पाते रहेंगे। आजकल के समय प्रमाण कुमार जीवन में श्रेष्ठ बनना बहुत बड़ा भाग्य है। हम श्रेष्ठ भाग्यवान आत्मा हैं, यही सदा सोचो। याद और सेवा का सदा बैलेन्स रहे। बैलेन्स रखने वालों को सदा ब्लैसिंग मिलती रहेगी। अच्छा–

08-04-1984

यह विशेष खुशी सदा रहती है कि आदि से हम आत्माओं का साथ रहने का और साथी बनने का दोनों ही विशेष पार्ट है। साथ भी रहे और फिर जहां तक जीना है वहां तक स्थिति में भी बाप समान साथी बन रहना है। तो साथ रहना और साथी बनना यहह विशेष वरदान आदि से अन्त तक मिला हुआ है। स्नेह से जन्म हुआ, ज्ञान तो पहले नहीं था ना। स्नेह से ही पैदा हुए, जिस स्नेह से जन्म हुआ वही स्नेह सभी को देने के लिए विशेष निमित्त हो। जो भी सामने आये विशेष आप सबसे बाप के स्नेह का अनुभव करे। आप में बाप का चित्र और आपकी चलन से बाप का चरित्र दिखाई दे। अगर कोई पूंछे कि बाप के चरित्र क्या हैं तो आपकी चलन चरित्र दिखायें। क्योंकि स्वयं बाप के चरित्र देखने और साथ-साथ चरित्र में चलने वाली आत्मायें हो। चरित्र जो भी हुए वह अकेले बाप के चरित्र नहीं हैं। गोपी वल्लभ और गोपिकाओं के ही चरित्र हैं। बाप ने बच्चों के साथ ही हर कर्म किया, अकेला नहीं किया। सदा आगे

बच्चों को रखा। तो आगे रखना यह चरित्र हुआ। ऐसे चरित्र आप विशेष आत्माओं द्वारा दिखाई दें। कभी भी ''मैं आगे रहूँ'' यह संकल्प बाप ने नहीं किया। इसमें भी सदा त्यागी रहे और इसी त्याग के फल में सभी को आगे रखा, इसलिए आगे का फल मिला। नम्बरवन हर बात में ब्रह्मा बाप ही बना। क्यों बना? आगे रखना आगे होना। इस त्याग भाव से। सम्बन्ध का त्याग वैभवों का त्याग कोई बड़ी बात नहीं। लेकिन हर कार्य में, संकल्प में भी औरों को आगे रखने की भावना। यह त्याग श्रेष्ठ त्याग रहा। इसको कहा जाता है स्वयं के भान को मिटा देना। मै पन को मिटा देना।

18-02-1986

आज आस्ट्रेलिया वाले बैठे हैं। आस्ट्रेलिया वालों की बापदादा सदा ही तपस्या और महादानी-पन की विशेषार्थ से उड़ती-कला का अनुभव करती हैं। बहुत काल की निर्विघ्न स्थिति, मजबूत स्थिति होती है। बार-बार विघ्नों के वश जो होते उन्हों का फाउण्डेशन कच्चा हो जाता है और बहुत काल की निर्विघ्न आत्मायें फाउण्डेशन पक्का होने कारण स्वयं भी शक्तिशाली दूसरों को भी शक्तिशाली बनाती हैं। कोई भी चीज टूटी हुई को जोड़ने से वह कमजोर हो जाती है। बहुतकाल की शक्तिशाली आत्मा,निर्विघ्न आत्मा अन्त में भी निर्विघ्न बन पास विद आनर बन जाती है या फर्स्ट डिवीजन में आ जाती है। तो सदा यही लक्ष्य रखो कि बहुतकाल की निर्विघ्न स्थिति का अनुभव अवश्य करना है। ऐसे नहीं समझो विघ्न आया, मिट तो गया ना। कोई हर्जा नहीं। लेकिन बार-बार विघ्न आना और मिटाना इसमें टाइम वेस्ट जाता है। एनर्जी वेस्ट जाती है। वह टाइम और एनर्जी सेवा में लगाओ ते एक का पदम जमा हो जायेगा। इसलिए बहुतकाल की निर्विघ्न आत्मायें, विघ्न विनाशक रुप से पूजी जाती हैं। विघ्न विनाशक टाइटिल पूज्य आत्माओं का है। मैं विघ्न विनाशक पूज्य आत्मा हूँ इस स्मृति से सदा निर्विघ्न बन आगे उड़ती कला द्वारा उड़ते चलो और उड़ाते चलो। समझा। अपने विघ्न विनाश तो किये लेकिन औरों के लिए विघ्न विनाशक बनना है। देखो आप लोगों को निमित्त आत्मा भी ऐसी मिली है (निर्मला डाक्टर) जो शरु से लेकर किसी भी विघ्न में नहीं आये। सदा न्यारे और प्यारे रहे हैं। थोड़ा सा स्ट्रिक्ट रहती। यह भी जरुरी है। अगर ऐसी स्ट्रिक्ट टीचर नहीं मिलती तो

इतनी वृद्धि नहीं होती। यह आवश्यक भी होता है। जैसे कड़वी दवाई बीमारी के लिए जरुरी होती है ना। तो ड्रामा अनुसार निमित्त आत्माओं का भी संग तो लगता ही है और जैसे स्वयं आने से ही सेवा के निमित्त बन गये तो आस्ट्रेलिया में आने से सेन्टर खोलने की सेवा में लग जाते। यह त्याग की भावना का वायब्रेशन सारी आस्ट्रेलिय और जो भी सम्पर्क वाले स्थान हैं उनमें उसी रुप से वृद्धि हो रही है। तपस्या और त्याग जिसमें है वही श्रेष्ठ आत्मा है। तीव्र पुरुषार्थी तो सभी आत्मायें हैं लेकिन पुरुषार्थी होते हुए भी विशेषताएं अपना प्रभाव जरुर डालती हैं। सम्पन्न तो अभी सब बन रहे हैं ना। सम्पन्न बन गये, यह सर्टिफिकेट किसको भी मिला नहीं है। लेकिन सम्पन्नता के समीप पहुँच गये हैं। इसमें नम्बरवार हैं। कोई बहुत समीप पहुँच गये हैं। इसमें नम्बरवार हैं। कोई बहुत समीप पहुँचे हैं, कोई नम्बरवार आगे पीछे हैं। आस्ट्रेलिया वाले लकी है। त्याग का बीज भाग्य प्राप्त करा रहा है। शक्ति सेना भी बापदादा को अति प्रिय है। क्योंकि हिम्मत-वाली है। सदा सन्तुष्ट रहने वाले हो ना। सन्तुष्टता सफलता आपका जन्म सिद्ध अधिकार है। समझा। जो नियरेस्ट और डियरेस्ट होता है उनको अपना समझ हमेशा पीछे, लेकिन आस्ट्रेलिया वालों के ऊपर एक्स्ट्रा हुज्जत है। अच्छा-

22-03-1986

बापदादा पहले से ही सुना चुके हैं कि बहुतकाल की प्राप्ति के हिसाब का समय अभी बहुत कम है। इसलिए बापदादा बच्चों को सदा बहुतकाल के लिए विशेष दृढ़ता की तपस्या द्वारा स्वयं को तपाना आर्थात् मजबूत करना, परिपक्व करना इसके लिए यह विशष समय दे रहें हैं। वैसे तो गोल्डन जुबली में भी सभी ने संकल्प किया कि समान बनेंगे। विघ्न विनाशक बनेंगे। समाधान स्वरूप बनेंगे। यह सब वायदे बाप के पास चित्रगुप्त के रूप में हिसाब के खाते में नूँधे हुए हैं। आज भी कई बच्चों ने दृढ़ सेकल्प किया। समर्पण होना अर्थात् स्वयं को सर्व प्राप्तियों में परिपक्व बनाना। समर्पणता का अर्थ ही है संकल्प बोल कर्म और सम्बन्ध इन चारों में ही बाप समान बनना। पत्र जो लिख कर दिया वह पत्र वा संकल्प सूक्ष्मवतन में बापदादा के पास सदा

के लिए रिकार्ड में रह गया। सबकी फाइल्स वहाॅ बतन में हैं। हर एक का यह संकल्प अविनाशी हो गया।

इस वर्ष बच्चों के दृढ़ता की तपस्या से हर संकल्प को अमर, अविनाशी बनाने के लिए स्वयं से बार-बार दृढ़ता के अभ्यास से रुह-रुहाण करने के लिए, रियलाइजेशन करने के लिए ओर रीइनकारनेट स्वरुप बन फिर कर्म में आने के लिए इस स्थिति को सदाकाल के लिए और मजबूत करने के लिए, बापदादा यह समय दे रहें हैं। साथ-साथ विशेष रूप में शुद्ध सेंकल्प की शक्ति के जमा का खाता और बढ़ाना है। शुद्ध संकल्प की शक्ति का विशेष अनुभव अभी और अन्तर्मुखी बन करने की आवश्यकता है। शुद्ध संकल्पों की शक्ति सहज व्यर्थ संकल्पों को समाप्त कर दूसरों के प्रति भी शुभ भावना, शुभ कामना के स्वरुप से परिवर्तन कर सकते हैं। अभी इस शुद्ध संकल्प के शक्ति का विशेष अनुभव अभी और सहज व्यर्थ संकल्पों को समाप्त कर देती है। न सिर्फ अपने व्यर्थ संकल्प लेकिन आपके शुद्ध संकल्प दूसरों के प्रति भी शुभ भावना, शुभ कामना के स्वरुप से परिवर्तन कर सकते हैं। अभी इस शुद्ध संकल्प के शक्ति की स्वयं के प्रति भी स्टाक जमा करने की बहुत आवश्यकता है। मुरली सुनना यह लगन तो बहुत अच्छी है। मुरली अर्थात् खजाना। मुरली की हर पाइंट को शक्ति के रुप में जमा करना यह है शुद्ध संकल्प शक्ति को बढ़ाना। शक्ति के रुप मे हर समय कार्य में लगाना। अभी इस विशेषता का विशेष अटेन्शन रखना है। शुद्ध संकल्प की शक्ति के महत्व को अभी जितना अनुभव करते जायेगे उतना मन्सा सेवा के भी सहज अनुभव बनते जायेगे। पहले तो स्वयं के प्रति शुद्ध संकल्पों की शकति जमा चाहिए। और फिर साथ-साथ आप सभी बाप के साथ विश्व कल्याणकारी आत्मायें विश्व परिवर्तक आत्मायें हो। तो विश्व के प्रति भी यह शुद्ध संकल्पों की शक्ति द्वारा परिवर्तन करने का कार्य अभी बहुत रहा हुआ है। जैसे वर्तमान समय ब्रह्मा बाप अव्यक्त रुपधारी बन शुद्ध संकल्प की शक्ति से आप सबकी पालना कर रहें हैं। सेवा की वृद्धि के सहयोगी बन आगे बढ़ा रहें हैं। यह विशेष सेवा शुद्ध संकल्प के शकति की चल रही है। तो ब्रह्मा बाप समान अभी इस विशेषता को

अपने में बढ़ाने का तपस्या के रुप में अभ्यास करना है। तपस्या अर्थात् दृढ़ता सम्पन्न अभ्यास। साधारण को तपस्या नहीं कहेंगे तो अभी तपस्या के लिए समय दे रहें हैं। अभी ही क्यों दे रहें हैं? क्योंकि यह समय आपके बहुतकाल में जमा हो जायेगा। बापदादा सभी को बहुतकाल को प्राप्ति कराने के निमित्त हैं। बापदादा सभी बच्चों को बहुतकाल के राज्य भाग्य अधिकारी बनाना चाहते हैं। तो बहुतकाल के राज्य भाग्य के अधिकारी बनाना चाहते हैं। तो बहुत काल कासमय बहुत थोड़ा है। इसलिए हर बात के अभ्यास को तपस्या के रुप में करने के लिए यह विशेष समय दे रहें हैं। क्योंकि समय ऐसा आयेगा- जिसमें आप सभी को दाता और वरदाता बन थोड़े समय में अनेकों को देना पड़ेगा। तो सर्व खजानों के जमा का खाता सम्पन्न बनाने के लिए समय दे रहें हैं।

यह लास्ट चांस नहीं फास्ट चांस है। जो किसी भी बात का बिना स्वार्थ के दिल से त्याग करता है उसका भाग्य बहुत होता। स्वार्थ के त्याग का भाग्य नहीं होता। नि:स्वार्थ त्याग का भाग्य बहुत बड़ा है। 31-03-1986

अब समय प्रमाण सर्व स्नेही, सर्वश्रेष्ठ बच्चों से बापदादा और विशेष क्या चाहते हैं। वैसे तो पूरी सीजन में समय प्रति समय इशारे देते हैं। अब उन इशारों को प्रत्यक्ष रुप में देखने का समय आ रहा है। स्नेही आत्मायें हो सहयोगी आत्मायें हो। सेवाधारी आत्मायें भी हो। स्नेही आत्मायें हो सहयोगी आत्मायें हो। सेवाधारी आत्मायें भी हो। अभी महातपस्वी आत्मायें बनो। अपने संगठित स्वरुप से मुक्त करने का महान कार्य करने का समय है। जैसे एक तरफ खूने-नाहक खेल की लहर बढ़ती जा रही है, सर्व आत्मायें अपने को बेसहारे अनुभव कर रहीं हैं, ऐसे समय पर सभी सहारे की अनुभूति कराने के निमित्त आप महातपस्वी आत्मायें हो। चारों ओर इस तपस्वी स्वरुप द्वारा आत्माओं को रुहानी चैन अनुभव कराना है। सारे विश्व की आत्मायें प्रकृति से, वायुमण्डल से, मनुष्य आत्माओं से, अपने मन के कमजोरियों से, तन से बेचैन हैं। ऐसी आत्माओं को सुख-चैन की स्थिति का एक सेकेण्ड भी अनुभव करायेंगे तो आपका दिल से बार-बार शुक्रिया मानेंगे।

तपस्वी मूर्त का अर्थ है- तपस्या द्वारा शान्ति के शक्ति की किरणें चारो ओर फैलती हुई अनुभव में आवें। सिर्फ स्वयं के प्रति याद स्वरुप बन शक्ति सेना वा मिलन मनाना वह अलग बात है। लेकिन तपस्वी स्वरुप औरों को देने का स्वरुप है। जैसे सूर्य विश्व को रोशनी की और अनेक विनाशी प्राप्तियों की अनुभूति कराता है। ऐसे महान तपस्वी रुप द्वारा प्राप्ति के किरणों की अनुभूति कराओ। इसके लिए पहले जमा का खाता बढ़ाओ। ऐसे नहीं याद से वा ज्ञान के मनन से स्वयं को श्रेष्ठ बनाया, मायाजीत विजयी बनाया इसी में सिर्फ खुश नहीं रहना।

तपस्या स्वरुप अर्थात् लेवता के त्यागमूर्त। यह हद के लेवता, त्याग मूर्त, तपस्वी मूर्त बनने नहीं देगा। इसलिए तपस्वी मूर्त अर्थात् हद के इच्छा मात्रम् अविद्या रुप। जो लेने का संकल्प करता वह अल्पकाल के लिए लेता है लेकिन सदाकाल के लिए गंवाता है। इसलिए बापदादा बार-बार इस बात का इशारा दे रहें हैं। तपस्वी रुप में विशेष विघ्न रुप यही अल्पकाल की इच्छा है। इसलिए अभी विशेष तपस्या का अभ्यास करना है। समान बनने का यह सबूत देना है। स्नेह का सबूत दिया यह तो खुशी की बात है। अभी तपस्वी मूर्त बनने का सबूत दो। समझा। बैराइटी संस्कार होते हुए भी विधातापन के संस्कार अन्य संस्कारों को दबा देगा। तो अब इस संस्कार को इमर्ज करो। समझा। 07-04-1986

तपस्या का अर्थ सुनाया- दृढ़ संकल्प से कोई भी कार्य करना। जहाँ यथार्थ सेवा भाव है वहाँ तपस्या का भाव अलग नहीं। त्याग, तपस्या, सेवा इन तीनों का कम्बाइन्ड रुप सच्ची सेवा है, और नामधारी सेवा का फल अल्पकाल का होता है। वहाँ ही सेवा की और वहाँ ही अल्पकाल के प्रभाव का फल, अल्पकाल की महिमा है। बहुत अच्छा भा किया, बहुत अच्छा कोर्स कराया बहुत अच्छी सेवा की। तो अच्छा-अच्छा कहने का अल्पकाल का फल मिला और उनको महिमा सुनने का व अल्पकाल का फल मिला। लेकिन अनुभूति कराना अर्थात् बाप से सम्बन्ध जुड़वाना, शक्तिशाली बनाना- यह है सच्ची सेवा। सच्ची सेवा में त्याग तपस्या न हो यह ५०-५० वाली सेवा नहीं, लेकिन २५ प्रतिशत सेवा है।

सच्चे सेवाधारी की निशानी है- त्याग अर्थात् नम्रता, और तपस्या अर्थात् एक बाप के निश्चय, नशे में दृढ़ता। यथार्थ सेवा इसको कहा जाता है। बापदादा निरन्तर सच्चे सेवाधारी बनने के लिए कहते हजैं। नाम सेवा हो और स्वयं भी डिस्टर्ब हो, दूसरे को भी डिस्टर्ब करे इस सेवा से मुक्त होने के लिए बापदादा कह रहें हैं। ऐसी सेवा न करना अच्छा है। क्योंकि सेवा का विशेष गुण सन्तुष्टता है। जहाँ सन्तुष्टता नहीं, चाहे स्वयं से चाहे सम्पर्क वालों से, वह सेवा न स्वयं को फल की प्राप्ति करायेगी न दूसरों को। इससे स्वयं अपने को पहले सन्तुष्टमणी बनाए फिर सेवा में आवे वह अच्छा है। नहीं तो सूक्ष्म बोझ जरुर है। वह अनेक प्रकार का बोझ उड़ती कला में विघ्न रुप बन जाता है। बोझ चढ़ाना नहीं है, बोझ उतारना है। जब ऐसे समझते हो तो इससे एकान्तवासी बनना अच्छा है क्योंकि एकान्तवासी बनने से स्व परिवर्तन का अटेन्शन जायेगा। तो बापदादा तपस्या जो कर रहे हैं- वह सिर्फ दिन रात बैठे-बैठे तपस्या के लिए नहीं कह रहे हैं। तपस्या में बैठना भी सेवा ही है। लाइट हाउस, माइट हाउस बन शांन्ति की शक्ति की किरणों द्वारा वायुमण्डल बनाना है। तपस्या के साथ मन्सा सेवा जुड़ी हुई है। अलग नहीं है। नहीं तो तपस्या के साथ मन्सा सेवा जुड़ी हुई है। अलग नहीं है। नहीं तो तपस्या क्या करेंगे! श्रेष्ठ आत्मा ब्राह्मण आत्मा तो हो गये। अब तपस्या अर्थात् स्वयं सर्व शक्तियों से सम्पन्न बन दृढ़ स्थिति, दृढ़ संकल्प द्वारा विश्व की सेवा करना। सिर्फ वाणी की सेवा, सेवा नहीं है। जैसे सुख-शान्ति पवित्रता का आपस में सम्बन्ध है वैसे त्याग, तपस्या सेवा का सम्बन्ध है। बापदादा तपस्वी रुप अर्थात् शक्तिशाली सेवाधारी रुप बनाने के लिए कहते हैं। तपस्वी रुप की दृष्टि भी सेवा करती। उनका शान्त स्वरुप चेहरा भी सेवा करता, तपस्वी मूर्त के दर्शन मात्र से भी प्राप्ति की अनुभूति होती है। इसलिए आजकल देखो जो हठ से तपस्या करते हैं उनके दर्शन के पीछे भी कितनी भीड़ हो जाती है। यह आपकी तपस्या के प्रभाव का यादगार अन्त तक चला आ रहा है। तो समझा सेवा भाव किसको कहा जाता है। सेवा भाव अर्थात् सर्व की कमजोरियों को समाने का भाव। कमजोरियों का सामना करने का भाव नहीं, समाने का भाव। स्वयं सहन कर दूसरे को शक्ति देने का भाव। इसलिए सहनशक्ति कहा जाता है। सहन करना शक्ति

भरना और शक्ति देना है। सहन, मरना नहीं है। कई सोचते हैं हम तो सहन कर कर मर जायेंगे। क्या हमें मरना है क्या! लेकिन यह मरना नहीं है। यह सब के दिनों में स्नेह से जीना है। कैसा भी विरोधी हो, रावण से भी तेज हो, एक बार नहीं १० बार सहन करना पड़े फिर भी सहनशक्ति का फल अविनाशी और मधुर होगा। वह भी जरुर बदल जायेगा। सिर्फ यह भावना नहीं रखो कि मैंने इतना सहन किया, तो यह भी कुछ करें। अल्पकाल के फल की भावना नहीं रखो। रहम भाव रखो- इसको कहा जाता है सेवाभाव। ऐसी सच्ची सेवा का सबूत दे सपूत की लिस्ट में आने का गोल्डन चान्स दे रहें हैं। इस वर्ष यह नहीं देखेंगे कि मेला वा फंक्शन बहुत अच्छा किया। लेकिन सन्तुष्टमणियाँ बन सन्तुष्टता की सेवा में नम्बर आगे जाना। विघ्न विनाशक टाइटिल के सेरीमनी में इनाम लेना। समझा! इसी को ही कहा जाता है नष्टोमोहा स्मृति स्वरुप। तो १८ वर्ष की समाप्ति का यह विशेष सम्पन्न बनने का अध्याय स्वरुप में दिखाओ। इसको ही कहा जाता बाप समान बनना। अच्छा! 09-04-1986

निश्चयबुद्धि अर्थात् सदा बाप पर बलिहार जाने वाले। बलिहार अर्थात् सर्वन्श समर्पित। सर्व वंश सहित समर्पित। चाहे देह भान में लाने वाले विकारों का वंश, चाहे देह के सम्बन्ध का वंश, चाहे देह के विनाशी पदार्थों की इच्छाओं का वंश। सर्व वंश में यह सब आ जाता है। सर्वन्श समर्पित वा सर्वन्श त्यागी एक ही बात है। समर्पित होना इसको नहीं कहा जाता कि मधुबन में बैठ गये वा सेवाकेन्द्रों पर बैठ गये। यह भी एक सीढ़ी है जो सेवा अर्थ अपने को अर्पण करते हैं लेकिन 'सर्वन्श अर्पित' - यह सीढ़ी की मंजिल है। एक सीढ़ चढ़ गये लेकिन मंजिल पर पहूँचने वाले निश्चय बुद्धि की निशानी है - तीनों ही वंश सहित अर्पित। तीनों ही बातें स्पष्ट जान गये ना। वंश तब समाप्त होता है जब स्वप्न वा संकल्प में भी अंश मात्र नहीं। अगर अंश है तो वंश पैदा हो ही जायेगा। इसलिए सर्वन्श त्यागी की परिभाषा अति गुह्य है। यह भी कभी सुनायेंगे।

सदा अपने को राजऋ समझते हो? एक तरफ है राज्य, दूसरे तरफ है वैराग - दोनों का बैलेन्स हो। बेहद का वैराग, वैराग नहीं लेकिन प्राप्तिस्वरूप बना

देता है क्योंकि पुरानी दुनिया से वैराग लाते हो और नई दुनिया के मालिक बन जाते हो। तो नाम वैराग है लेकिन मिलती प्राप्ति है। छोड़ने में ही लेना है। एक देते हो और पदम् लेते हो! तो बेहद का वैराग राज्य भाग्य दिलाने वाला है। एक जन्म के लिए वैराग अनेक जन्मों के लिए सदा श्रेष्ठ भाग्य। ऐसे राजऋषि हो? राजऋषि

कुमार और कुमारियों का ही गायन है। तो ऐसी राजऋषि आत्मायें हैं - इस नशे में सदा रहो। अच्छा! 27-12-1987

आज बापदादा चारों ओर के स्वमानधारी बच्चों को देख रहे हैं। स्वमानधारी बच्चों का ही सारा कल्प सम्मान होता है। एक जन्म स्वमानधारी, सारा कल्प सम्मानधारी। अपने राज्य में भी राज्य-अधिकारी बनने के कारण प्रजा द्वारा सम्मान प्राप्त होता है और आधा कल्प भक्तों द्वारा सम्मान प्राप्त करते हो। अब अपने लास्ट जन्म में भी भक्तों द्वारा देव आत्मा वा शक्ति रुप का सम्मान देख रहे हो और सुन रहे हो। कितना सिक व प्रेम से अभी भी सम्मान दे रहे हैं! इतना श्रेष्ठ भाग्य कैसे प्राप्त किया! मुख्य सिर्फ एक बात के त्याग का यह भाग्य है। कौनसा त्याग किया? देह अभिमान का त्याग किया। क्योंकि देह अभिमान के त्याग बिना स्वमान में स्थित हो ही नहीं सकते। इस त्याग के रिटर्न में भाग्यविधाता भगवान ने यह भाग्य का वरदान दिया है। दूसरी बात - स्वयं बाप ने आप बच्चों को स्वमान दिया है। बाप ने बच्चों को चरणों के दास वा दासी से अपने सिर का ताज बना दिया। कितना बड़ा स्वमान दिया! ऐसे स्वमान प्राप्त करने वाले बच्चों का बाप भी सम्मान रखते हैं। बाप बच्चों को सदा अपने से भी आगे रखते हैं। सदा बच्चों के गुणों का गायन करते हैं। हर रोज सिक व प्रेम से यादप्यार देने के लिए परमधाम से साकार वतन में आते हैं। वहां से भेजते नहीं लेकिन आकर देते हैं। रोज़ यादप्यार मिलता है ना। इतना श्रेष्ठ सम्मान और कोई दे नहीं सकता। स्वयं बाप ने सम्मान दिया है, इसलिए अविनाशी सम्मान अधिकारी बने हो। ऐसे श्रेष्ठ को अनुभव करते हो? स्वमान और सम्मान - दोनों का आपस में सम्बंध है। 01-12-1989

सबसे पहला कदम – '*सर्वन्श त्यागी*"। न सिर्फ तन से और लौकिक सम्बंध से लेकिन सबसे बड़ा त्याग, पहला त्याग मन-बुद्धि से समर्पण। अर्थात् मन-बुद्धि में हर समय बाप और श्रीमत की हर कर्म में स्मृति रही। सदा स्वयं को निमित्त समझ हर कर्म में न्यारे और प्यारे रहे। देह के सम्बध से, मैं-पन का त्याग। जब मन-बुद्धि की बाप के आगे समर्पणता हो जाता है। तो देह के सम्बंध स्वत: ही त्याग हो जाते हैं। तो पहला कदम – **सर्वन्श त्याग**।

विश्व-सेवाधारी। सेवा की विशेषता- एक तरफ अति निर्माण-वर्ल्ड सर्वेन्ट; दूसरे तरफ ज्ञान की अथार्टी। जितना ही निर्माण उतना ही बेपरवाह बादशाह। सत्यता की निर्भयता–यही सेवा की विशेषता है। कितना भी सम्बंधियों ने, राजनेताओं ने, धर्म-नेताओं ने नये ज्ञान के कारण ऑपोजीशन किया लेकिन सत्यता और निर्भयता की पोजीशन से जरा भी हिला न सके। इसको कहते हैं 'निर्माणता और अथॉर्टी का बैलेंस।" इसकी रिजल्ट आप सभी देख रहे हो। गाली देने वाले भी मन से आगे झुक रहे हैं। सेवा की सफलता का विशेष आधार निर्माण-भाव, निमित्त-भाव, बेहद का भाव। इसी विधि से ही सिद्धिस्वरुप बने। 20-01-1990

समय की परिस्थितियों के प्रमाण, स्व की उन्नति के प्रमाण, तीव्र गति के सेवा के प्रमाण, बापदादा के स्नेह के रिटर्न देने के प्रमाण - तपस्या अति आवश्यक है। प्यार करना अति सहज है और सब करते हैं – यह भी बाप जानते हैं लेकिन रिटर्न स्वरूप में 'बापदादा समान बनना है।' इस समय बापदादा यह देखने चाहते हैं। इसमें कोई में कोई निकलता है। चाहना सभी की है। लेकिन चाहने वाले और करने वाले – इसमें संख्या का अन्तर है। क्योंकि तपस्या का सदा और सहज फाउन्डेशन है – 'बेहद का वैराग्य।' बेहद का वैराग्य अर्थात् चारों ओर के किनारे छोड़ देना। क्योंकि किनारे को सहारा बना दिया है। समय प्रमाण प्यारे बने और समय प्रमाण श्रीमत पर निमित्त बनी हुई आत्माओं के इशारे प्रमाण सेकेण्ड में बुद्धि प्यारे से फिर न्यारी बन जाये, वह नहीं होती। जितना जल्दी प्यारे बनते हो, उतने न्यारे नहीं बनते हो। प्यारे बनने में होशियार है, न्यारे बनने में सोचते हैं, हिम्मत चाहिए। न्यारा बनना ही किनारा

छोड़ना है और किनारा छोड़ना ही बेहद की वैराग्य वृत्ति है। किनारों को सहारा बनाए पकड़ना आता है लेकिन छोड़ने में क्या करते हो? लम्बा क्वेश्चन मार्क लगा देते हो। सेवा का इन्चार्ज बनना बहुत अच्छा आता है लेकिन इन्चार्ज के साथ-साथ स्वयं की और औरों की बैटरी चार्ज करने में मुश्किल लगता है। **इसलिए वर्तमान समय तपस्या द्वारा वैराग्य वृत्ति की अति आवश्यकता है।**

तपस्या की सफलता का विशेष आधार वा सहज साधन है – एक शब्द का पाठ पक्का करो। दो-तीन लिखना मुश्किल होता है। एक लिखना बहुत सहज है। तपस्या अर्थात् एक का बनना। जिसको बापदादा 'एकनामी' कहते हैं। तपस्या अर्थात् मन-बुद्धि को 'एकाग्र करना,' तपस्या अर्थात् 'एकान्त-प्रिय' रहना, तपस्या अर्थात् स्थिति को 'एकरस रखना,' तपस्या अर्थात् सर्व प्राप्त खजानों को व्यर्थ से बचाना अर्थात् 'इकॉनामी' से चलना। तो एक का पाठ पक्का हुआ ना – एक का पाठ मुश्किल है वा सहज है? है तो सहज, लेकिन – ऐसी भाषा तो नहीं बोलेंगे ना।

तपस्या करना, बेहद की वैराग्य वृत्ति में रहना सहज है ना। किनारों को छोड़ना मुश्किल है? लेकिन बनना भी आपको ही है। कल्प-कल्प की प्राप्ति के अधिकारी बने हो और अवश्य बनेंगे। अच्छा। 13-12-1990

तपस्या ही बड़े-ते–बड़ा समारोह है। क्योंकि हठयोग तो करना नहीं है। तपस्या अर्थात् बाप से मौज मनाना। मिलन की मौज, सर्व प्राप्तियों की मौज, समीपता के अनुभव की मौज, समान स्थिति की मौज। तो ये समारोह हुआ ना। सेवा के बड़े-बड़े समारोह नहीं करेंगे, लेकिन तपस्या का वातावरण वाणी के समारोह से भी ज्यादा आत्माओं को बाप की तरफ आकर्षित करेगा। तपस्या रूहानी चुम्बक है जो आत्माओं को शान्ति और शक्ति के अनुभव का दूर से अनुभव होगा। तो अपने में क्या नवीनता लायेंगे? नवीनता ही सबको प्रिय लगती है ना। तो सदैव अपने को चेक करो कि आज के दिन मन्सा अर्थात् स्वयं के संकल्प शक्ति में विशेष क्या विशेषता लाई? और अन्य आत्माओं के प्रति मन्सा सेवा अर्थात् शुभ भावना, शुभ कामना के विधि द्वारा कितना वृद्धि को प्राप्त किया? अर्थात् श्रेष्ठता की नवीनता क्या लाई?

साथ-साथ बोल में मधुरता, सन्तुष्टता, सरलता की नवीनता कितनी लाई? ब्राह्मण आत्माओं के बोल साधारण बोल नहीं होते। बोल में इन तीनों बातों में से अपने को और अन्य आत्माओं को अनुभूति हो। इसको कहा जायेगा नवीनता। साथ में हर कर्म में नवीनता अर्थात् हर कर्म स्व के प्रति व अन्य आत्मा के प्रति प्राप्ति का अनुभव करायेगा। कर्म का प्रत्यक्षफल व भविष्य जमा का फल अनुभव हो। वर्तमान समय प्रत्यक्षफल सदा खुशी और शक्ति की प्रसन्नता की अनुभूति हो और भविष्य जमा का अनुभव हो। तो सदैव अपने को भरपूर सम्पन्न अनुभव करेंगे। कर्म रूपी बीज प्राप्ति के वृक्ष से भरपूर हो। खाली नहीं हो। भरपूर आत्मा का नेचुरल नशा अलौकिक होता है। 31-12-1990

तपस्या का अर्थ ही है सन्तुष्टता की पर्सनालिटी नयनों में, चैन में, चेहरे में, चलन में दिखाई दे। ऐसे सन्तुष्ट मणियों की माला बना रहे थे। कितनी माला बनी होगी? सन्तुष्ट मणि अर्थात् बेदाग मणि। सन्तुष्टता की निशानी है – सन्तुष्ट आत्मा सदा प्रसन्नचित्त स्वयं को भी अनुभव करेगी और दूसरे भी प्रसन्न होंगे। प्रसन्नचित्त स्थिति में प्रश्न चित्त नहीं होता। एक होता है प्रसन्नचित्त, दूसरा है प्रश्नचित्त। प्रश्न अर्थात् क्वेश्चन। प्रसन्नचित्त ड्रामा के नॉलेजफुल होने के कारण प्रसन्न रहता, प्रश्न नहीं करता। जो भी प्रश्न अपने प्रति या किसके प्रति भी उठता उसका उत्तर स्वयं को पहले आता। 17-03-1991

आज बापदादा अपने सर्व तपस्वीराज बच्चों को देख रहे हैं। तपस्वी भी हो और राज-अधिकारी भी हो इसलिए तपस्वीराज हो। तपस्या अर्थात् राज्य अधिकारी बनना। तपस्या राजा बनाती है। तो सभी राजा बने हो ना। तपस्या का बल क्या फल देता है? अधीन से अधिकारी अर्थात् राजा बना देता है इसलिए गायन भी है कि तपस्या से राज्य भाग्य प्राप्त होता है। तो भाग्य कितना श्रेष्ठ है! ऐसा भाग्य सारे कल्प में किसी को भी प्राप्त नहीं हो सकता। इतना बड़ा भाग्य है जो भाग्य विधाता को अपना बना दिया है। एक एक भाग्य अलग मांगने की आवश्यकता नहीं है। भाग्य विधाता से सर्व भाग्य वर्से में ले लिया है। वर्सा कभी मांगा नहीं जाता है। सर्व भाग्य,

भाग्य विधाता ने स्वयं ही दिया है। तपस्या अर्थात् आत्मा कहती है मैं तेरी तू मेरा, इसको ही तपस्या कहा जाता है। इसी तपस्या के बल से भाग्य विधाता को अपना बना दिया है। भाग्य विधाता बाप भी कहते हैं मैं तेरा। तो कितना श्रेष्ठ भाग्य हो गया! भाग्य के साथ साथ स्वराज्य अभी मिला है। भविष्य विश्व का राज्य स्वराज्य का ही आधार है। इसीलिए तपस्वीराज हो। बापदादा को भी अपने हर एक राज्य अधिकारी बच्चे को देख हर्ष होता है। भक्ति में अनेक जन्मों में बापदादा के आगे क्या बोला? याद है या भूल गये हो? बार बार अपने को मैं गुलाम, मैं गुलाम ही बोला है। मैं गुलाम तेरा। बाप कहते हैं मेरे बच्चे और गुलाम! सर्व शक्तिवान के बच्चे और गुलाम शोभता है! इसलिए बाप ने मैं गुलाम तेरा के बजाए क्या अनुभव कराया? मैं तेरा। तो गुलाम से राजा बन गये। अभी भी कभी गुलाम तो नहीं बनते हो ? गुलामपन के पुराने संस्कार कभी इमर्ज तो नहीं होते हैं? माया के गुलाम होते हो? राजा कभी गुलाम नहीं बन सकता है। गुलामपन छूट गया वा कभी कभी अच्छा लगता है? तो तपस्या का बल बहुत श्रेष्ठ है और तपस्या क्या करते हो? तपस्या में मेहनत करते हो? बापदादा ने सुनाया था कि तपस्या क्या है? मौज मनाना। तपस्या अर्थात् बहुत सहज नाचना और गाना बस। नाचना गाना सहज होता है वा मुश्किल होता है? मनोरंजन होता है वा मेह-नत होती है? तो तपस्या में क्या करते हो ?तपस्या का प्रत्यक्षफल है खुशी। तो खुशी में क्या होता है? नाचना। तपस्या अर्थात् खुशी में नाचना और बाप के और अपने आदि अनादि स्वरूप के गुण गाना। तो यह गीत कितना बड़ा और कितना सहज है। इसमें गला ठीक है वा नहीं ठीक है इसकी भी जरूरत नहीं है। निरन्तर यह गीत गा सकते हो। निरन्तर खुशी में नाचते रहो। तो तपस्या का अर्थ क्या हुआ ? नाचना और गाना कितना सहज है।

तपस्या का उमंग उत्साह अच्छा है। अटेन्शन भी है सफलता भी है लेकिन स्वयं प्रति सर्व खजाने यूज ज्यादा करते हो। अपनी अनुभूतियां करना यह भी अच्छी बात है। लेकिन तपस्या वर्ष स्वयं प्रति और विश्व सेवा प्रति ही दिया हुआ है। तपस्या के वायब्रेशन्स विश्व में और तीव्रगति से फैलाओ। जो सुनाया कि योग के प्रयोग को और अनुभव की प्रयोगशाला में प्रयोग की गति को बढ़ाओ। वर्तमान समय सर्व

आत्माओं को आवश्यकता है आपके शक्तिशाली वायब्रेशन्स द्वारा वायुमण्डल द्वारा परिवर्तन होने की। इसीलिए प्रयोग को और बढ़ाओ। सहयोगी बच्चे भी बहुत हैं। यह सहयोग ही योग में बदल जायेगा। एक हैं स्नेही सहयोगी और दूसरे हैं सहयोगी योगी। और तीसरे हैं निरन्तर योगी प्रयोगी। अभी अपने से पूछो मैं कौन। लेकिन बापदादा को तीनों ही प्रकार के बच्चे प्रिय हैं। कई बच्चों के वायब्रेशन्स बापदादा के पास पहुंचे हैं। भिन्न भिन्न प्रकार के वायब्रेशन्स हैं। जानते हो कौन सी बात बाप के पास पहुंची है? इशारे से समझने वाले हो ना? इस तपस्या वर्ष में जो कुछ हो रहा है इसका कारण क्या? बड़े बड़े प्रोजेक्ट कर रहे हो इसका कारण क्या? कोई समझते हैं कि यही तपस्या का फल है। कोई समझते हैं तपस्या वर्ष में यह क्यों? दोनों वायब्रेशन्स आते हैं। लेकिन यह समय की तीव्रगति और तपस्या के वायब्रेशन्स से आवश्यकता का पूर्ण होना यह तपस्या के बल का फल है। फल तो खाना पड़ेगा ना। यह ड्रामा दिखाता है कि तपस्या सर्व आवश्यकताओं को समय पर सहज पूर्ण कर सकती है। समझा। क्वेश्चन नहीं उठ सकता कि यह क्यों हो रहे हैं। तपस्या अर्थात् सफलता सहज अनुभूति हो। 26-01-1991

आज चारों ओर के तपस्वी बच्चों की याद बापदादा के पास पहुँच रही है। कोई साकार में सम्मुख याद का रिटर्न मिलन मना रहे हैं कोई बच्चे आकारी रूप में याद और मिलन का अनुभव कर रहे हैं। बापदादा दोनों ही रूप के बच्चों को देख रहे हैं। आज अमृतवेले बापदादा बच्चों की तपस्या का प्रत्यक्ष स्वरूप देख रहे थे। हर एक बच्चा अपने पुरुषार्थ प्रमाण तपस्या कर रहे हैं। लक्ष्य भी है और उमंग भी है। तपस्वी सभी हैं क्योंकि ब्राह्मण जीवन की विशेषता ही तपस्या है। तपस्या अर्थात् एक के लगन में मग्न रहना। सफल तपस्वी बहुत थोड़े हैं। पुरुषार्थी तपस्वी बहुत हैं। सफल तपस्वी की निशानी उनके सूरत और सीरत में प्योरिटी की पर्सनैलिटी और प्योरिटी की रॉयल्टी सदा स्पष्ट अनुभव होगी। तपस्या का अर्थ ही है मन-वचन-कर्म और सम्बन्ध-सम्पर्क में अपवित्रता का अंश मात्र भी विनाश होना। नाम- निशान समाप्त होना। जब अपवित्रता समाप्त हो जाती है तो इस समाप्ति को ही सम्पन्न

स्थिति कहा जाता है। सफल तपस्वी अर्थात् सदा-स्वत: पवित्रता की पर्सनैलिटी और रॉयल्टी, हर बोल और कर्म से, दृष्टि और वृत्ति से अनुभव हो। प्योरिटी सिर्फ ब्रह्मचर्य नहीं, सम्पूर्ण पवित्रता अर्थात् संकल्प में भी कोई भी विकार टच न हो। जैसे ब्राह्मण जीवन में शारीरिक आकर्षण व शारीरिक टचिंग अपवित्रता मानते हो, ऐसे मन-बुद्धि में किसी विकार के संकल्प मात्र की आकर्षण व टचिंग, इसको भी अपवित्रता कहा जायेगा। पवित्रता की पर्सनैलिटी वाले, रॉयल्टी वाले मन-बुद्धि से भी इस बुराई को टच नहीं करते। क्योंकि सफल तपस्वी अर्थात् सम्पूर्ण वैष्णव। वैष्णव कभी बुरी चीज को टच नहीं करते हैं। तो उन्हों का है स्थूल, आप ब्राह्मण वैष्णव आत्माओं का है सूक्ष्म। बुराई को टच न करना यही तपस्या है। धारण करना अर्थात् ग्रहण करना। ये तो बहुत मोटी बात है। लेकिन संकल्प में भी टच नहीं करना। इसको ही कहा जाता है सच्चे वैष्णव।

सिर्फ याद के समय याद में रहना इसको तपस्या नहीं कहा जाता। तपस्या अर्थात् प्योरिटी के पर्सनैलिटी और रॉयल्टी का स्वयं भी अनुभव करना और औरों को भी अनुभव कराना। सफल तपस्वी का अर्थ ही है विशेष महान आत्मा बनना। विशेष आत्माओं वा महान आत्माओं को देश की वा विश्व की पर्सनैलिटीज़ कहते हैं। पवित्रता की पर्सनैलिटी अर्थात् हर कर्म में महानता और विशेषता। पर्सनैलिटी अर्थात् सदा स्वयं की और औरों की सेवा में सदा बिज़ी रहना अर्थात् अपनी इनर्जी, समय, संकल्प वेस्ट नहीं गँवाना, सफल करना। इसको कहेंगे पर्सनैलिटी वाले। पर्सनैलिटी वाले कभी भी छोटी-छोटी बातों में अपने मन-बुद्धि को बिज़ी नहीं रखते हैं। तो अप-वित्रता की बातें आप श्रेष्ठ आत्माओं के आगे छोटी हैं या बड़ी हैं? इसलिए तपस्वी अर्थात् ऐसी बातों को सुनते हुए नहीं सुनें, देखते हुए नहीं देखें। ऐसा अभ्यास किया है? ऐसी तपस्या की है? वा यही सोचते हो चाहते तो नहीं हैं, लेकिन दिखाई दे देता है, सुनाई दे देता है? जैसे कोई चीज़ से आपका कनेक्शन ही नहीं हैं, उन चीजों को देखते हुए नहीं देखते हो ना। जैसे रास्ते पर जाते हो, कहीं कुछ दिखाई देता है परन्तु आपके मतलब की कोई बात नहीं है, तो देखते हुए नहीं देखेंगे ना। साइड सीन समझ कर पार कर लेंगे ना? ऐसे जो बातें सुनते हो, देखते हो, आपके काम की नहीं हैं, तो

सुनते हुए नहीं सुनो, देखते हुए न देखो। अगर मन-बुद्धि में धारण किया, कि ये ऐसे हैं, ये वैसे हैं... इसको कहा जायेगा व्यर्थ बुराई को टच किया अर्थात् सच्चा वैष्णवपन सम्पूर्ण रूप से नहीं है। प्योरिटी के पर्सनैलिटी में परसेन्टेज कम अर्थात् तपस्या की परसेन्टेज कम। तो समझा तपस्या क्या है?

इसी विधि से अपने आपको चेक करो- तपस्या वर्ष में तपस्या का प्रत्यक्ष स्वरूप प्योरिटी की पर्सनैलिटी अनुभव करते हो? पर्सनैलिटी कभी छिप नहीं सकती। प्रत्यक्ष दिखाई जरूर देती है। जैसे साकार ब्रह्मा बाप को देखा- प्योरिटी की पर्सनैलिटी कितनी स्पष्ट अनुभव करते थे। ये तपस्या के अनुभव की निशानी अब आप द्वारा औरों को अनुभव हो। सूरत और सीरत दोनों द्वारा अनुभव करा सकते हो। अभी भी कई लोग अनुभव करते भी हैं। लेकिन इस अनुभव को और स्वयं द्वारा औरों में फैलाओ। आज पर्सनैलिटी का सुनाया। फिर रॉयल्टी का सुनायेंगे।

सभी तपस्वी आत्माएं हैं – ऐसे अनुभव करते हो? तपस्या अर्थात् एक बाप दूसरा न कोई। ऐसे है या दूसरा कोई है अभी भी कोई है? कोई व्यक्ति या कोई वैभव? एक के सिवाए और कोई नहीं या थोड़ा२ लगाव है? निमित्त बनकर सेवा करना वह और बात है लेकिन लगाव जहाँ भी होगा, चाहे व्यक्ति में, चाहे वैभव में, तो लगाव की निशानी है, वहाँ बुद्धि जरूर जायेगी। मन भागेगा जरूर। तो चेक करो कि सारे दिन में मन और बुद्धि कहाँ-कहाँ भागती है? सिवाए बाप और सेवा के और कहाँ तो मन-बुद्धि नहीं जाती? अगर जाती है तो लगाव है। अगर व्यवहार भी करते हो, जो भी करते हो, वो भी ट्रस्टी बनकर। मेरा नहीं, तेरा। मेरा काम है, मुझे ही देखना पड़ता है.. मेरी जिम्मेवारी है.. ऐसे कहते हो कभी? क्या करें, मेरी जिम्मेवारी है ना, निभाना पड़ता है ना, करना पड़ता है ना, कहते हो कभी? या तेरा तेरे अर्पण, मेरा कहां से आया? तो यह बोल भी नहीं बोल सकते हो? मुझे ही देखना पड़ता है, मुझे ही करना पड़ता है, मेरा ही है, निभाना ही पड़ेगा...। मेरा कहा और बोझ हुआ। बाप का है, बाप करेगा, मैं निमित्त हूँ तो हल्के। बोझ उठाने की आदत तो नहीं है? ६३ जन्म बोझ उठाया ना। कइयों की आदत होती है बोझ उठाने की। बोझ उठाने बिना रह नहीं सकते। आदत से मजबूर हो जाते हैं। मेरा मानना माना बोझ उठाना। समझा। थोड़ा सा

किनारा करके रखा है, समय पर काम में आयेगा ?। पाण्डवों ने थोड़ा बैंक बैलेन्स, थोड़ा जेब खर्च रखा है ? जरा भी मेरापन नहीं। मेरा माना मैला। जहाँ मेरापन होगा ना वहाँ विकारों का मैलापन जरूर होगा। तेरा है तो क्या होगा ? तैरते रहेंगे, डूबेंगे नहीं। तैरने में तो मजा आता है ना ! तो तपस्या अर्थात् तेरा, मेरा नहीं। अच्छा-

04-12-1991

आज बापदादा चारों ओर के सर्व तपस्वी कुमार और तपस्वी कुमारियों में तपस्या की विशेष निशानी देख रहे हैं। तपस्वी आत्मा की विशेषतायें पहले भी सुनाई है। आज और विशेषता सुना रहे हैं। तपस्वी आत्मा अर्थात् सदा ऑनेस्ट आत्मा। ऑनेस्टी ही तपस्वी की विशेषता है। ऑनेस्ट आत्मा अर्थात् हर कर्म में, श्रीमत में चलने में आनेस्ट होगी। ऑनेस्ट अर्थात् वफादार और इमानदार। श्रीमत पर चलने के ऑनेस्ट अर्थात् वफादार। ऑनेस्ट आत्मा स्वत: ही हर कदम श्रीमत के इशारे प्रमाण उठाती है। उनका हर कदम आटोमेटिक श्रीमत के इशारे पर ही चलता है। जैसे साइन्स की शक्ति द्वारा कई चीजें इशारे से आटोमेटिक चलती हैं, चलाना नहीं पड़ता, चाहे लाइट द्वारा, चाहे वायब्रेशन द्वारा स्विच ऑन किया और चलता रहता है। लेकिन साइन्स की शक्ति विनाशी होने के कारण अल्पकाल के लिए चलती है। अविनाशी बाप के साइलेन्स की शक्ति द्वारा इस ब्राह्मण जीवन में सदा और स्वत: ही सहज चलते रहते हैं। ब्राह्मण जन्म मिलते ही दिव्य बुद्धि में बापदादा ने श्रीमत भर दी। ऑनेस्ट आत्मा उसी श्रीमत के इशारे से नेचुरल सहज चलती रहती है। तो ऑनेस्ट की पहली निशानी – हर सेकण्ड हर कदम श्री मत पर एक्यूरेट चलना। चलते सभी हैं लेकिन चलने में भी अनेक प्रकार की भिन्नता हो जाती है। कोई सहज और तीव्रगति से चलते हैं। क्योंकि उस आत्मा को श्रीमत स्पष्ट सदा स्मृति में रहने के कारण समर्थ है। यह है नम्बरवन ऑनेस्टी। नम्बरवन आत्मा को सोचना नहीं पड़ता कि यह श्रीमत है या नहीं, यह राइट है या रांग है, क्योंकि स्पष्ट है। दूसरी आत्माओं को स्पष्ट न होने के कारण कई बार सोचना पड़ता है। इसलिए तीव्र गति से मध्यम गति हो जाती है। साथ२ कोई सोचता है, कोई थकता है। चलते सभी हैं लेकिन सोचने और थकने वाले सेकेण्ड नम्बर हो जाते हैं। थकते क्यों हैं ? चलते-चलते श्रीमत के इशारों में मनमत

परमत मिक्स कर देते हैं, इसलिए स्पष्ट और सीधे रास्ते से भटक टेढ़े बांके रास्ते में चले जाते हैं। रिजल्ट में फिर भी वापस लौटना ही पड़ता है। क्योंकि मंज़िल का रास्ता एक ही स्पष्ट सीधा और सहज है। सीधे को टेढ़ा बना देते हैं। तो आप सोचो टेढ़ा चलने वाला कहाँ तक चलेगा, किस स्पीड से चलेगा? और परिणाम क्या होगा? थकना और निराश होकर लौटना। इसलिए सेकेण्ड नम्बर हो जाता है। अनेक सेकेण्ड गँवाया, अनेक श्वांस गँवाया, सर्व शक्तियां गँवाया, इसलिए सेकेण्ड नम्बर हो गया। सिर्फ इसमें नहीं खुश हो जाना कि हम तो चल रहे हैं। लेकिन अपनी चाल और गति दोनों को चेक करो। तो समझा, ऑनेस्टी किसको कहा जाता है?

ऑनेस्ट आत्मा की और निशानी है – वह कभी किसी भी खज़ाने को वेस्ट नहीं करेगा। सिर्फ स्थूल धन वा खज़ाने की बात नहीं है लेकिन और भी अनेक खज़ाने आपको मिले हैं। ऑनेस्ट संगमयुग के समय के खज़ाने को एक सेकेण्ड भी वेस्ट नहीं करेगा। क्योंकि संगमयुग का एक सेकेण्ड, वर्ष से भी ज्यादा है। जैसे गरीब आत्मा का स्थूल धन आठ आना आठ सौ के बराबर है। क्योंकि आठ आने में सच्चे दिल की भावना आठ सौ से ज्यादा है। ऐसे संगमयुग का समय एक सेकेण्ड इतना बड़ा है। क्योंकि एक सेकेण्ड में पद्मों जितना जमा होता है। सेकेण्ड गँवाया अर्थात् पद्मों जितनी कमाई का समय गँवाया। ऐसे ही संकल्प का खज़ाना, ज्ञान धन का खज़ाना, सर्व शक्तियों, सर्व गुणों का खज़ाना वेस्ट नहीं करेंगे। अगर सर्व शक्तियों, सर्व गुणों व ज्ञान को स्व-प्रति वा सेवा-प्रति काम में नहीं लगाया तो इसको भी वेस्ट कहा जायेगा। दाता ने दिया और लेने वाले ने धारण नहीं किया, तो वेस्ट हुआ ना! जो ऑनेस्ट होता है वह सिर्फ धन को प्राप्त कर रख नहीं देता। ऑनेस्ट की निशानी है खज़ाने को बढ़ाना। बढ़ाने का साधन ही है कार्य में लगाना। अगर ज्ञान-धन को भी समय प्रमाण सर्व आत्माओं के प्रति या स्व की उन्नति के प्रति यूज़ नहीं करते हो तो खज़ाना कभी भी बढ़ेगा नहीं। ऑनेस्ट मैनेजर या डायरेक्टर उसको ही कहा जाता है जो कोई भी कार्य में प्रॉफिट करके दिखाये। प्रगति करके दिखाये। ऐसे ही संकल्प के खज़ाने को, गुणों को, शक्तियों को कार्य में लगाकर प्रॉफिट करने वाले हैं या वेस्ट करने वाले हैं? आनेस्ट की निशानी है – वेस्ट नहीं करना, प्रॉफिट करना। अपना तन, मन और

स्थूल धन – यह तीनों ही बाप का दिया हुआ खज़ाना है। आप सबने तन, मन, धन वा वस्तु, जो भी थी वो अर्पण कर दी। संकल्प किया कि सब कुछ तेरा, ऐसा नहीं थोड़ा धन मेरा थोड़ा बाप का,थोड़ा धन किनारे रखें, जेबखर्च रखा है, थोड़ा२ आईवेल के लिए किनारे करके रखा है। आइवेल के लिए किनारे कर रखना यह समझदारी है। जितना ही मेरा होगा उतना ही जहाँ मेरा२ होता वहाँ बहुत बातें हेराफेरी होती हैं। क्योंकि उसको छिपाना पड़ता है ना! भक्ति मार्ग वाले भी समझते हैं- ये मेरे मेरे का फेरा है। इसलिए जब सब कुछ तेरा कह दिया तो कोई भी तन, मन या धन, वस्तु, सिर्फ धन नहीं लेकिन वस्तु भी धन है। वस्तु बनती किससे है? धन से ही बनती है ना, तो कोई भी वस्तु, कोई भी स्थूल धन, कोई भी मन से संकल्प और तन से व्यर्थ कर्म करना या व्यर्थ समय गँवाना तन द्वारा, यह भी वेस्ट में गिना जायेगा। तो ऑनेस्ट तन को भी व्यर्थ के तरफ नहीं लगाते। संकल्प को भी वेस्ट में नहीं लगाते। जहाँ भी रहते हो, चाहे प्रवृत्ति वाले हैं, चाहे सेन्टर वाले हैं, चाहे मधुबन वाले हैं, सबका तन-मन-धन बाप का है वा प्रवृत्ति वाले समझते हैं कि हम समर्पण तो है नहीं तो मेरा ही है। नहीं। यह तो बाप की अमानत है। तो ऑनेस्टी अर्थात् अमानत में कभी भी ख्यानत नहीं करें। वेस्ट करना अर्थात् अमानत में ख्यानत करना। ऑनेस्ट की निशानी वह अमानत में कभी भी ख्यानत कर नहीं सकता। छोटी सी वस्तु को भी वेस्ट नहीं करेगा। कई बार अपने बुद्धि के अलबेलेपन के कारण वा शरीर द्वारा कार्य में अलबेलेपन के कारण छोटी-छोटी वस्तु वेस्ट भी हो जाती है। फिर यह सोचते हैं कि मैंने यह जानबूझ कर नहीं किया, तो हो गया अर्थात् अलबेलापन। चाहे बुद्धि का हो, चाहे शरीर के मेहनत का अलबेलापन हो, दोनों प्रकार का अलबेलापन वेस्ट कर देता है। तो वेस्ट नहीं करना है। एक से दस गुना बढ़ाना है, न कि वेस्ट करना है। जिसको बापदादा सदा एक सलोगन में कहते हैं – कम खर्चा बाला नशीन। ये है बढ़ाना और वो है गँवाना। ऑनेस्ट अर्थात् तन मन और धन को सदा सफल करने वाला। यह है ऑनेस्ट आत्मा की निशानी। तो तपस्वी अर्थात् यह सब ऑनेस्टी की विशेषतायें हर कर्म में प्रयोग में आवे। ऐसे नहीं कि समाया हुआ तो सब हैं, जानते भी सब हैं। लेकिन नहीं, तपस्या, योग का अर्थ ही है प्रयोग में लाना। अगर इन विशेषताओं को प्रयोग में नहीं

लाते तो प्रयोगी नहीं, तो योगी भी नहीं। यह सब खज़ाने बापदादा ने प्रयोग करने के लिए दिये हैं। और जितना प्रयोगी बनेंगे, तो प्रयोगी की निशानी है प्रगति। अगर प्रगति नहीं होती है तो प्रयोगी नहीं। कई आत्मायें ऐसे अपने अन्दर समझती भी हैं कि न आगे बढ़ रहे हैं, न पीछे हट रहे हैं। जैसे हैं, वैसे ही हैं। और कई ऐसे भी कहते हैं कि शुरु में बहुत अच्छे थे, बहुत नशा था अभी नशा कम हो गया है। तो प्रगति हुई या क्या हुआ? उड़ती कला हुई या ठहरती कला हुई तो प्रयोगी बनो। ऑनेस्टी का अर्थ ही है प्रगति करने वाला प्रयोगी। ऐसे प्रयोगी बने हो या अन्दर समाकर रखते हो- खज़ाना अन्दर ही रहे? ऐसे ऑनेस्ट हो?

जो ऑनेस्ट होता है उसके ऊपर बाप का, परिवार का स्वत: ही दिल का प्यार और विश्वास होता है। विश्वास के कारण फुल अधिकार उसको दे देते हैं। ऑनेस्ट आत्मा को स्वत: ही बाप का वा परिवार का प्यार अनुभव होगा। बड़ों का, चाहे छोटों का, चाहे समान वालों का, विश्वासपात्र अनुभव होगा। ऐसे प्यार के पात्र वा विश्वास के पात्र कहाँ तक बने हैं? यह भी चेक करो। ऐसे चलाओ नहीं कि इसके कारण मेरे में विश्वास नहीं है,तो मैं विश्वासपात्र कैसे बनूँ, अपने को पात्र बनाओ। कई बार ऐसे कहते हैं कि मै तो अच्छा हूँ लेकिन मेरे में विश्वास नहीं है। फिर उसके कारण लम्बे चौड़े सुनाते हैं। वह तो अनेक कारण बताते भी हैं और कई कारण बनते भी हैं। लेकिन ऑनेस्टी दिल की, दिमाग की भी ऑनेस्टी चाहिए। नहीं तो दिमाग से नीचे ऊपर बहुत करते हैं। तो दिल की भी ऑनेस्टी दिमाग की भी ऑनेस्टी। अगर सब प्रकार की ऑनेस्टी है तो ऑनेस्टी अविश्वास वाले को आज नहीं तो कल विश्वास में ला ही लेगी। जैसे कहावत है सत्य की नांव डूबती नहीं है लेकिन डगमग होती है। तो विश्वास की नांव सत्यता है, ऑनेस्टी है तो डगमग होगी लेकिन अविश्वासपात्र बनना अर्थात् डूबेगी नहीं। इसलिए सत्यता की हिम्मत से विश्वासपात्र बन सकते हो। पहले सुनाया था ना कि सत्य को सिद्ध नहीं किया जाता है। सत्य स्वयं में ही सिद्ध है। सिद्ध नहीं करो लेकिन सिद्धि स्वरूप बन जाओ। तो समय के गति के प्रमाण अभी तपस्या के कदम को सहज और तीव्र गति से आगे बढ़ाओ। समझा- तपस्या वर्ष में क्या

करना है? अभी भी कुछ समय तो पड़ा है। इन सब विधियों को स्वयं में धारण कर सिद्धि स्वरूप बनो। अच्छा- 18-12-1991

सदा एकरस स्थिति के आसन पर स्थित रहने वाले ही तपस्वी हैं

सभी अपने को तपस्वी आत्मायें अनुभव करते हो? तपस्वी अर्थात् सदा अपनी तपस्या में रहने वाले। तो तपस्या क्या है? एक बाप दूसरा न कोई। ऐसे तपस्वी हो या दूसरा-तीसरा भी कोई है? तपस्वी सदा आसनधारी होते हैं, कोई न कोई आसन पर तपस्या करते हैं। तो आपका आसन कौनसा है? स्थिति आपका आसन है। जैसे एकरस स्थिति यह आसन हो गया। फ़रिश्ता स्थिति यह आसन हो गया। तो आसन पर स्थित होते हैं ना, बैठते हैं अर्थात् स्थित हो जाते हैं। तो इन श्रेष्ठ स्थितियों में स्थित हो जाते हो, टिक जाते हो इसी को आसन कहा जाता है। स्थूल आसन पर स्थूल शरीर बैठता है लेकिन यह श्रेष्ठ स्थितियों के आसन पर मन-बुद्धि को बिठाना है। मन-बुद्धि द्वारा इन स्थितियों में स्थित हो जाते हो अर्थात् बैठ जाते हो - ऐसे तपस्वी हो? तो अच्छा आसन मिला है ना। यहाँ है आसन फिर भविष्य में मिलेगा सिंहासन। तो जितना जो आसन पर स्थित रहता वो उतना ही सिंहासन पर भी स्थित रह सकता है। जितना समय चाहो, जब चाहो, तब आसन रूपी स्थिति में स्थित होते हो ना। होते हो या हलचल होती है? क्या होता है? जैसे देखो शरीर आसन पर नहीं टिक सकता तो हलचल करेगा ना। ऐसे मन हलचल तो नहीं करता? अचल है या हलचल भी है कि दोनों है? सदा अचल अडोल। ज़रा भी हलचल नहीं हो। अगर कभी हलचल और कभी अचल है तो सिंहासन भी कभी मिलेगा, कभी नहीं मिलेगा। तो सदा का राज्य भाग्य लेना है या कभी-कभी का और स्थित सदा होना है या कभी-कभी? कितना भी कोई हिलावे लेकिन आप अचल रहो। परिस्थिति श्रेष्ठ है या स्वस्थिति श्रेष्ठ है? कभी परिस्थिति वार कर लेती है? तो सोचो कि ये परिस्थिति पावरफुल या स्वस्थिति पावरफुल? तो इस स्थिति से कमज़ोर से शक्तिशाली बन जायेंगे। आप तपस्वी आत्माओं की स्थिति का यादगार आजकल के तपस्वियों ने कॉपी की है लेकिन उल्टी की है। आप तपस्वी एकरस स्थिति में एकाग्र होते हो और

आजकल के क्या करते हैं? एक टांग पर खड़े हो जाते हैं। तो कहाँ एकरस स्थिति और कहाँ एक टांग पर स्थित रहना, फ़र्क हो गया ना। आपका कितना सहज है! और उन्हों का कितना मुश्किल है! तो सहजयोगी हो ना। एक को याद करना सहज है वा अनेकों को याद करना सहज है? तो द्वापर से क्या किया? अनेकों को याद किया और अभी क्या करते हो? एक को याद करते हो ना। 02-12-1993

रिचेस्ट इन दी वर्ल्ड हो तो आराम ही आराम है। बड़े से बड़ी युनिवर्सिटी में भी ऐसे कोचों पर पढ़ाई पढ़ने के लिए नहीं बैठते हैं, लेकिन आप बेगर टू प्रिन्स हो। बेगर भी हो और प्रिन्स भी हो। सर्व त्याग माना बेगर। सर्व प्राप्तियां अर्थात् प्रिन्स। बिना त्याग के इतना बड़ा भाग्य नहीं मिलता है। त्याग का ही भाग्य मिला है। तन-मन-धन, सम्बन्ध सभी त्याग किया अर्थात् परिवर्तन किया। तन मेरा के बजाए तेरा किया। मन, धन, सम्बन्ध एक शब्द परिवर्तन होने से मेरे के बजाए तेरा किया, है एक शब्द का परिवर्तन लेकिन इसी त्याग से भाग्य के अधिकारी बन गये। तो भाग्य के आगे यह त्याग क्या है? छोटी बात है या थोड़ी बड़ी भी है? कभी-कभी बड़ी हो जाती है। तेरा कहना माना बड़ी बात को छोटा करना और मेरा कहना माना छोटी बात को बड़ी करना। क्या भी हो जाए, १०० हिमालय से भी बड़ी समस्या आ जाए लेकिन तेरा कहना और पहाड़ को रूई बनाना, राई भी नहीं, रुई। जो रूई सेकण्ड में उड़ जाए। सिर्फ तेरा कहना नहीं मानना, सिर्फ मानना भी नहीं चलना। एक शब्द का परि-वर्तन सहज ही है ना! 13-03-1998

समय समीप के प्रमाण अभी सच्ची तपस्या वा साधना है ही बेहद का वैराग्य। सेवा का विस्तार इस वर्ष में बहुत किया। इस वर्ष चारों ओर बड़े-बड़े प्रोग्राम किये और सेवा से सहयोगी आत्मायें भी बहुत बने हैं, समीप आये हैं, सम्पर्क में आये हैं, लेकिन क्या सिर्फ सहयोगी बनाना है? यहाँ तक रखना है क्या? सहयोगी आत्मायें अच्छी-अच्छी हैं, अब उन सहयोगी क्वालिटी वाली आत्माओं को और संबंध में लाओ। अनुभव कराओ, जिससे सहयोगी से सहज योगी बन जाएं। इसके लिए एक तो साधना का वायुमण्डल और दूसरा बेहद की वैराग्य वृत्ति का वायुमण्डल हो तो

इससे सहज सहयोगी सहज योगी बन जायेंगे। उन्हों की सेवा भले करते रहो लेकिन साथ में साधना, तपस्या का वायुमण्डल आवश्यक है।

बाप समान बनना है तो पहले बेहद की वैराग्य वृत्ति धारण करो। यही ब्रह्मा बाप की अन्त तक विशेषता देखी। न वैभव में लगाव रहा, न बच्चों में.. सबसे वैराग्य वृत्ति। तो आज के दिन का बाप समान बनने का पाठ पक्का करना। बस ब्रह्मा बाप समान बनना ही है। ऐसा दृढ़ निश्चय अवश्य आगे बढ़ायेगा। 18-01-1999

ब्रह्मा बाप का त्याग ड्रामा में विशेष नूंधा हुआ है। आदि से ब्रह्मा बाप का त्याग और आप बच्चों का भाग्य नूंधा हुआ है। सबसे नम्बरवन त्याग का एक्जैम्पुल ब्रह्मा बाप बना। त्याग उसको कहा जाता है - **जो सब कुछ प्राप्त होते हुए त्याग करे।** समय अनुसार, समस्याओं के अनुसार त्याग श्रेष्ठ त्याग नहीं है। शुरू से ही देखो तन, मन, धन, सम्बन्ध, सर्व प्राप्ति होते हुए त्याग किया। शरीर का भी त्याग किया, सब साधन होते हुए स्वयं पुराने में ही रहे। साधनों का आरम्भ हो गया था। होते हुए भी साधना में अटल रहे। यह ब्रह्मा की तपस्या आप सब बच्चों का भाग्य बनाकर गई। ड्रामानुसार ऐसे त्याग का एक्जैम्पुल रूप में ब्रह्मा ही बना और इसी त्याग ने संकल्प शक्ति की सेवा का विशेष पार्ट बनाया। जो नये-नये बच्चे संकल्प शक्ति से फास्ट वृद्धि को प्राप्त कर रहे हैं। तो सुना ब्रह्मा के त्याग की कहानी।

ब्रह्मा की तपस्या का फल आप बच्चों को मिल रहा है। तपस्या का प्रभाव इस मधुबन भूमि में समाया हुआ है। साथ में बच्चे भी हैं, बच्चों की भी तपस्या है लेकिन निमित्त तो ब्रह्मा बाप कहेंगे। जो भी मधुबन तपस्वी भूमि में आते हैं तो ब्राह्मण बच्चे भी अनुभव करते हैं कि यहाँ का वायुमण्डल, यहाँ के वायब्रेशन सहजयोगी बना देते हैं। योग लगाने की मेहनत नहीं, सहज लग जाता है और कैसी भी आत्मायें आती हैं, वह कुछ न कुछ अनुभव करके ही जाती हैं। ज्ञान को नहीं भी समझते लेकिन अलौकिक प्यार और शान्ति का अनुभव करके ही जाते हैं। कुछ न कुछ परिवर्तन करने का संकल्प करके ही जाते हैं। यह है ब्रह्मा और ब्राह्मण बच्चों की तपस्या का प्रभाव। साथ में सेवा की विधि - भिन्न-भिन्न प्रकार की सेवा बच्चों से प्रैक्टिकल में

कराके दिखाई। उसी विधियों को अभी विस्तार में ला रहे हो। तो जैसे ब्रह्मा बाप के त्याग, तपस्या, सेवा का फल आप सब बच्चों को मिल रहा है। **ऐसे हर एक बच्चा अपने त्याग, तपस्या और सेवा का वायब्रेशन विश्व में फैलाये।** जैसे साइन्स का बल अपना प्रभाव प्रत्यक्ष रूप में दिखा रहा है ऐसे साइन्स की भी रचता साइलेन्स बल है। साइलेन्स बल को अभी प्रत्यक्ष दिखाने का समय है। 18-01-2000

हर एक अपने संस्कार को जानता भी है, छोड़ने चाहता भी है, तंग भी है, लेकिन सदा के लिए परिवर्तन करने में तीव्र पुरुषार्थी नहीं हैं। पुरुषार्थ करते हैं लेकिन तीव्र पुरुषार्थी नहीं हैं। कारण? तीव्र पुरुषार्थ क्यों नहीं होता? कारण यही है, जैसे रावण को मारा भी लेकिन सिर्फ मारा नहीं, जलाया भी। ऐसे मारने के लिए पुरुषार्थ करते हैं, थोड़ा बेहोश भी होता है संस्कार, लेकिन जलाया नहीं तो बेहोशी से बीच-बीच में उठ जाता है। इसके लिए **पुराने संस्कार का संस्कार करने के लिए इस नये वर्ष में योग अग्नि से जलाने का दृढ़ संकल्प का अटेन्शन रखो।** कहते हैं ना क्या करना है इस नये वर्ष में? सेवा की तो बात अलग है लेकिन पहले स्वयं की बात है - योग लगाते हो, बापदादा बच्चों को योग में अभ्यास करते हुए देखते हैं। अमृतवेले भी बहुत पुरुषार्थ करते हैं लेकिन योग तपस्या, तप के रूप में नहीं करते हैं। प्यार से याद जरूर करते हैं, रूहरिहान भी बहुत करते हैं, शक्ति भी लेने का अभ्यास करते हैं लेकिन याद को इतना पावरफुल नहीं बनाया, जो जो संकल्प करो विदाई, तो विदाई हो जाए। योग को योग अग्नि के रूप में कार्य में नहीं लगाते। इसलिए योग को पावरफुल बनाओ। एकाग्रता की शक्ति विशेष संस्कार भस्म करने में आवश्यक है। जिस स्वरूप में एकाग्र होने चाहो, जितना समय एकाग्र होने चाहो, ऐसी एकाग्रता संकल्प किया और भस्म। इसको कहा जाता है योग अग्नि। नामनिशान समाप्त। मारने में फिर भी लाश तो रहता है ना! भस्म होने के बाद नामनिशान खत्म। तो इस वर्ष योग को पावरफुल स्टेज में लाओ। जिस स्वरूप में रहने चाहो मास्टर सर्वशक्तिवान, आर्डर करो, समाप्त करने की शक्ति आपके आर्डर से नहीं माने, यह हो नहीं सकता। मालिक हो। 31-12-2005

बापदादा ने देखा है स्नेह की सबजेक्ट में मैजारिटी पास हैं। आप सभी को किसने यहाँ लाया? सभी चाहे प्लेन में आये हो, चाहे ट्रेन में, चाहे बस में आये हो, लेकिन वास्तव में बापदादा के स्नेह के विमान में यहाँ पहुंचे हो। तो जैसे स्नेह की सबजेक्ट में पास है, अब यह कमाल करो समान बनने की सबजेक्ट में भी पास विद ऑनर बनके दिखाओ। पसन्द है? समान बनना पसन्द है? पसन्द है लेकिन बनने में थोड़ा मुश्किल है! समान बन जाओ तो समाप्ति सामने आयेगी। लेकिन कभी-कभी जो दिल में प्रतिज्ञा करते हो, बनना ही है। तो प्रतिज्ञा कमजोर हो जाती और परीक्षा मजबूत हो जाती है। चाहते सभी हैं लेकिन चाहना एक होती है प्रैक्टिकल दूसरा हो जाता हैं क्योंकि प्रतिज्ञा करते हो लेकिन दृढ़ता की कमी पड़ जाती है। समानता दूर हो जाती है, समस्या प्रबल हो जाती है। तो अब क्या करेंगे?

बापदादा को एक बात पर बहुत हंसी आ रही है। कौन सी बात? हैं महावीर लेकिन जैसे शास्त्रों में हनुमान को महावीर भी कहा है लेकिन पूंछ भी दिखाया है। यह पूंछ दिखाया है मैंपन का। जब तक महावीर इस पूंछ को नहीं जलायेंगे तो लंका अर्थात् पुरानी दुनिया भी समाप्त नहीं होगी। तो **अभी इस मैं, मैं की पूंछ को जलाओ तब समाप्ति समीप आयेगी।** जलाने के लिए ज्वालामुखी तपस्या, साधारण याद नहीं। ज्वालामुखी याद की आवश्यकता है। इसीलिए ज्वाला देवी की भी यादगार है। शक्तिशाली याद। तो सुना क्या करनाहै? **अब यह मन में धुन लगी हुई हो - समान बनना ही है, समाप्ति को समीप लाना ही है।** 30-11-2006

बापदादा को भी खुशी है कि मेरे बच्चे, फखुर है बाप को कि मेरे बच्चे सदा उत्साह में रहते उत्सव मनाते रहते हैं। हर रोज़ उत्सव मनाते हो या विशेष दिन पर? संगमयुग ही उत्सव है। युग ही उत्सव का है। और कोई युग संगमयुग जैसा नहीं है। तो सबको उमंग-उत्साह है ना कि हमें समान बनना ही है। है? बनना ही है, या देखेंगे, बनेंगे, करेंगे, गें गें तो नहीं है? जो समझते हैं बनना ही है, वह हाथ उठाओ। बनना ही है, त्याग करना पड़ेगा, तपस्या करनी पड़ेगी। तैयार है कुछ भी त्याग करना पड़े। सबसे बड़ा त्याग क्या है? त्याग करने में सबसे बड़े ते बड़ा एक शब्द विघ्न डालता

है। त्याग तपस्या वैराग्य, बेहद का वैराग्य, इसमें एक ही शब्द विघ्न डालता है, जानते तो हो। कौन सा एक शब्द है? 'मैं', बॉडी कान्सेस की मैं। इसलिए बापदादा ने कहा जैसे अभी जब भी मेरा कहते हो तो पहले क्या याद आता? मेरा बाबा। आता मेरा बाबा आता है ना! भले मेरा और कुछ भी करो लेकिन मेरा कहने से आदत पड़ गई है पहले बाबा आता है। ऐसे ही जब मैं कहते हैं, जैसे मेरा बाबा भूलता नहीं है, कभी किसको मेरा कहो ना तो बाबा शब्द आता ही है, ऐसे ही जब मैं कहो तो पहले आत्मा याद आवे। मैं कौन, आत्मा। मैं आत्मा यह कर रही हूँ। मैं और मेरा, हद का बदल बेहद का हो जाए। हो सकता है? हो सकता है? कांध तो हिलाओ। आदत डालो, मैं, फौरन आवे आत्मा। और जब मैं-पन आता है तो एक शब्द याद आवे - करावनहार कौन? बाप करावनहार करा रहा है। करावनहार शब्द करने के समय सदा याद रहे। मैं-पन नहीं आयेगा। मेरा विचार, मेरी ड्युटी, ड्युटी का भी बहुत नशा होता है। मेरी ड्युटी... लेकिन देने वाला दाता कौन! यह ड्युटीज़ प्रभु की देन हैं। प्रभु की देन को मैं मानना, सोचो अच्छा है? 05-03-2008

अधिक जानकारी के लिये सम्पर्क:

<u>स्पार्क – आध्यात्मिक अनुप्रयोग अनुसन्धान केन्द्र</u>

(SpARC - Spiritual Application Research Centre)

बेहतर विश्व निर्माण अकादमी,

ज्ञानसरोवर, आबू पर्वत – 307501

राजस्थान, भारत

+91 9414003497

sparcwing@bkivv.org

bksparc.in